अंक : 1, जून 2014

LEISA INDIA

लीज़ा इण्डिया

विशेष हिन्दी संस्करण

लीज़ा इण्डिया

विशेष हिन्दी संस्करण
जून 2014, अंक 1

यह अंक लीज़ा इण्डिया टीम के साथ मिलकर जी०ई०ए०जी० द्वारा प्रकाशित की जा रही है, जिसमें लीज़ा इण्डिया में प्रकाशित अंग्रेजी भाषा के कुछ मूल लेखों का हिन्दी में अनुवाद एवं संकलन है।

गोरखपुर एनवायरन्मेन्टल एक्शन ग्रुप
224, पुर्दिलपुर, एम०जी० कालेज रोड,
पोस्ट बाक्स 60, गोरखपुर- 273001
फोन : +91-551-2230004, फैक्स : +91-551-2230005
ईमेल : geagindia@gmail.com
वेबसाइट : www.geagindia.org

ए.एम.ई. फाउण्डेशन
नं० 204, 100 फीट रिंग रोड, 3rd फेज, 2nd ब्लाक, 3rd स्टेज,
बनशंकरी, बैंग्लोर- 560085, भारत
फोन : +91-080-26699512, +91-080-26699522
फैक्स :+91-080-26699410,
ईमेल : amebang@giasbg01.vsnl.net.in

लीज़ा इण्डिया
लीज़ा इण्डिया अंग्रेजी में प्रकाशित त्रैमासिक पत्रिका है, जो इलिया की सहभागिता से ए.एम.ई. फाउण्डेशन बैंग्लोर द्वारा प्रकाशित होती है।

मुख्य सम्पादक : के.वी.एस. प्रसाद, ए.एम.ई. फाउण्डेशन
प्रबन्ध सम्पादक : टी.एम.राधा, ए.एम.ई. फाउण्डेशन

अनुवाद समन्वय
अर्चना श्रीवास्तव, जी.ई.ए.जी.
अरूण कुमार शिवराय, ए.एम.ई. फाउण्डेशन

प्रबन्धन
रूक्मिणी जी.जी., ए.एम.ई. फाउण्डेशन

लेआउट एवं टाईपसेटिंग
राजकान्ती गुप्ता, जी.ई.ए.जी.

छपाई
कस्तूरी आफसेट, गोरखपुर

आवरण फोटो
जी.ई.ए.जी.

लीज़ा पत्रिका के अन्य सम्पादन
लैटिन, अमेरिकन, पश्चिमी अफ्रीकन, ब्राजीलियन एवं चाइनीज संस्करण

लीज़ा इण्डिया पत्रिका के अन्य क्षेत्रीय सम्पादन
तमिल, कन्नड़, उड़िया एवं तेलगु

सम्पादक की ओर से लेखों में प्रकाशित जानकारी के प्रति पूरी सावधानी बरती गई है। फिर भी दी गई जानकारी से सम्बन्धित किसी भी त्रुटि की जिम्मेदारी उस लेख के लेखक की होगी।

माइज़ेरियर के सहयोग एवं जी०ई०ए०जी० के समन्वयन में ए०एम०ई० द्वारा प्रकाशित

प्रिय पाठक

आप सभी को लीज़ा इण्डिया टीम की तरफ से हार्दिक शुभकामनाएं। आपके समक्ष हिन्दी अनुवाद का जून 2014 अंक प्रस्तुत है। आपके उत्साहवर्धक सहयोग के लिए धन्यवाद। यह अत्यन्त हर्ष का विषय है कि जर्मनी की एक दाता संस्था माइजेरियर इस गतिविधि को 2014–15 की अवधि के लिए सहयोग प्रदान करने पर सहमत हो गई है। इस सहयोग के साथ हम अधिकाधिक पाठकों और जमीन से जुड़ कर काम करने वाली संगठनों तक अपनी पहुँच बनाना चाहते हैं। हमें यह पत्रिका प्रेषित करते हुए अत्यन्त प्रसन्नता है। कृपया पत्रिका के साथ संलग्न फार्म को भरकर हमें वापस भेजें। हमें यह बताते हुए प्रसन्नता है कि हिन्दी अंक को अधिक प्रशंसा मिल रही है। स्थानीय भाषा में होने के कारण बहुत से पाठक इसे अच्छे ढग से समझ पा रहे हैं। हमें वास्तविक लेखों के लिए भी सकारात्मक प्रतिक्रिया मिल रही है।

हम उन सभी पाठकों के प्रति अत्यन्त अनुग्रहित हैं, जिन्होंने हमारे सर्वेक्षण पर अपनी प्रतिक्रिया दी व अपने विचारों को साझा किया। हम आगे भी उनसे निरन्तर बात–चीत करते रहेंगे। यदि आपका कोई किसान मित्र इस पत्रिका को पढ़ना चाहता है तो कृपया हमें उसका पत्र–व्यवहार का सम्पूर्ण पता लिख कर भेजें। उसे पत्रिका प्रेषित करते हुए प्रसन्नता होगी।

लीज़ा इण्डिया टीम
जून, 2014

लीज़ा

कम बाहरी लागत एवं स्थायी कृषि पर आधारित लीज़ा उन सभी किसानों के लिए एक तकनीक और सामाजिक विकल्प है, जो पर्यावरण सम्मत विधि से अपनी उपज व आय बढ़ाना चाहते हैं क्योंकि लीज़ा के अन्तर्गत मुख्यतः स्थानीय संसाधनों और प्राकृतिक तरीकों को अपनाया जाता है और आवश्यकतानुसार ही बाह्य संसाधनों का सुरक्षित उपयोग किया जाता है।

लीज़ा पारम्परिक और वैज्ञानिक ज्ञान का संयोग है, जो विकास के लिए आवश्यक वातावरण तैयार करता है। यह भी मुख्य है कि इसके द्वारा किसानों की क्षमता को विभिन्न तकनीकों से मजबूत किया जाता है और खेती को बदलती जरूरतों और स्थितियों के अनुकूल बनाया जाता है, साथ ही उन महिला एवं पुरुष किसानों व समुदायों का सशक्तिकरण होता है, जो अपने ज्ञान, तरीकों, मूल्यों, संस्कृति और संस्थानों के आधार पर अपना भविष्य बनाना चाहते हैं।

उत्पादक व टिकाऊ पारिवारिक खेती

आर. मनिकान्दन, सुभाषिनी श्रीधर, आर. अवर्ना थयावथी व के. विजयलक्ष्मी

एक व्यवस्थित तंत्र के साथ चक्रीय व्यवस्था का स्वयं दुहराव करते हुए संसाधनों, समय व ऊर्जा के पर्याप्त उपयोग को संभव बनाया जा सकता है। पौधों व जानवरों दोनों के सन्दर्भ में प्रजातियों के सावधानीपूर्वक चयन, स्थान एवं संसाधनों के पर्याप्त प्रभावी उपयोग व उचित चक्रीय प्रक्रिया से न केवल तंत्र में स्थाईत्व व लचीलेपन की वृद्धि होगी, वरन् इससे खेती की आमदनी में भी वृद्धि हो सकेगी। तमिलनाडु के एक किसान श्री थिलागर ने इसे सिद्ध कर दिखाया है।

ए.एम.ई. फाउण्डेशन, दक्कन के अर्द्धशुष्क क्षेत्र के लघु सीमान्त किसानों के बीच विकास एजेन्सियों के जुड़ाव, अनुभव के प्रसार, ज्ञानवर्द्धन एवं विभिन्न कृषि विकल्पों की उत्पत्ति द्वारा पर्यावरणीय कृषि को प्रोत्साहित करता है। यह कम लागत प्राकृतिक संसाधन प्रबन्धन के लिए पारम्परिक ज्ञान व नवीन तकनीकों के सम्मिश्रण से आजीविका स्थाईत्व को बढ़ावा देता है।

ए.एम.ई. फाउण्डेशन गाँव में इच्छुक किसानों के समूह को वैकल्पिक कृषि पद्धति तैयार करने व अपनाने में सक्षम बनाने हेतु उनके साथ जुड़कर सघन रूप से काम कर रही है। यह स्थान अभ्यासकर्ताओं व प्रोत्साहकों के लिए उनकी देखने–समझने की क्षमता में वृद्धि करने हेतु सीखने की परिस्थिति के तौर पर है। इससे जुड़ी स्वयं सेवी संस्थाओं और उनके नेटवर्क को जानने के लिए इसकी वेबसाईट देखें–www.amefound.org

गोरखपुर एनवायरन्मेन्टल एक्शन ग्रुप एक स्वैच्छिक संगठन है, जो स्थाई विकास और पर्यावरण से जुड़े मुद्दों पर सन् 1975 से काम कर रहा है। संस्था लघु एवं सीमान्त किसानों, आजीविका से जुड़े सवालों, पर्यावरणीय संतुलन, लैंगिक समानता तथा सहभागी प्रयास के सिद्धान्तों पर सफलतापूर्वक कार्य कर रही है। संस्था ने अपने 30 साल के लम्बे सफर के दौरान अनेक मूल्यांकनों, अध्ययनों तथा महत्वपूर्ण शोधों को संचालित किया है। इसके अलावा अनेक संस्थाओं, महिला किसानों तथा सरकारी विभागों का आजीविका और स्थाई विकास से सम्बन्धित मुद्दों पर क्षमतावर्धन भी किया है। आज जी0ई0ए0जी0 ने स्थाई कृषि, सहभागी प्रयास तथा जेण्डर जैसे विषयों पर पूरे उत्तर भारत में अपनी विशिष्ट पहचान बनाई है।

माइज़ेरियर वर्ष 1958 में स्थापित जर्मन कैथोलिक बिशप की संस्था है, जिसका गठन विकासात्मक सहयोग के लिए हुआ था। पिछले 50 वर्षों से माइज़ेरियर अफ्रीका, एशिया और लातिन अमेरिका में गरीबी के विरुद्ध लड़ने के लिए प्रतिबद्ध है। जाति, धर्म व लिंग भेद से परे किसी भी मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए यह हमेशा तत्पर है। माइज़ेरियर गरीबी और हानियों के विरुद्ध पहल करने के लिए प्रेरित करने में विश्वास रखता है। यह अपने स्थानीय सहयोगियों, चर्च आधारित संगठनों, गैर सरकारी संगठनों, सामाजिक आन्दोलनों और शोध संस्थानों के साथ काम करने को प्राथमिकता देता है। लाभार्थियों और सहयोगी संस्थाओं को एक साथ लेकर यह स्थानीय विकासात्मक क्रियाओं को साकार करने और परियोजनाओं को क्रियान्वित करने में सहयोग करता है। यह जानने के लिए कि स्थिर चुनौतियों की प्रतिक्रिया में माइज़ेरियर किस प्रकार अपनी सहयोगी संस्थाओं के साथ काम कर रहा है। इसकी वेबसाइट देखें (www.misereor.de; www.misereor.org)

अनुक्रमणिका

विशेष हिन्दी संस्करण, जून 2014

5 **उत्पादक व टिकाऊ पारिवारिक खेती**

आर. मनिकान्दन, सुभाषिनी श्रीधर, आर. अवर्ना थयावथी व के. विजयलक्ष्मी

7 **श्री विधि के विस्तार से और भी सुनहरा होता गेहूँ**

रवि चोपड़ा व देबाशीष सेन

10 **उन्नत प्रयासों से सीखना**

विश्वनाथ शाह एवं तुषार दास

14 **ज्ञान मंच (नेटवर्किंग)**

अनिबर्ता विश्वास

15 **पारिवारिक खेती की दस विशेषताएं**

जान डोय्वे वन दार प्लोएग

18 **किसान उत्पादक संघो ने उपभोक्ता मूल्यों में किसानों की हिस्सेदारी बढ़ाई**

पी. नन्दीश, आर. संजीव व आर.एस.एस. हूपर

श्री विधि के विस्तार से और भी सुनहरा होता गेहूँ

रवि चोपड़ा व देबाशीष सेन

पीपुल्स साइंस इन्स्टीच्यूट ने सबसे पहले रबी ऋतु 2006–07 के दौरान गेंहू की खेती में श्री विधि का उपयोग किया। किसानों के खेत पर व्यवस्थित तरीके से प्रारम्भ किये गये सघन गेंहू प्रणाली शोध परीक्षण का विस्तार आज बहुत से भारतीय राज्यों में पीपुल्स साइंस इन्स्टीच्यूट एवं अन्य स्वैच्छिक संगठनों के प्रयास से हो चुका है।

उन्नत प्रयासों से सीखना

बिश्वनाथ सिन्हा एवं तुषार दास

लघु एवं सीमान्त किसानों के बीच बड़े पैमाने पर श्री विधि को प्रोत्साहित करने के लिए सामूहिक रूप से विभिन्न प्रयास करने की आवश्यकता है। एस.डी.टी.टी. ने इस पद्धति को अपनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई और यही कारण है कि आज 6 वर्षों बाद इस विधि से की जाने वाली खेती का विस्तार 1.5 लाख किसानों तक हो चुका है। यह सब सहयोगी स्वैच्छिक संगठनों द्वारा खेत में क्रियान्वयन, शोध संस्थानों के साथ मिलकर सामूहिक रूप से किये गये शोध तथा एस.आर.आई. को मुख्य भूमिका में शामिल कराने हेतु राज्य एवं देश स्तर पर सरकारों के साथ व्यापक वार्ता से ही सम्भव हो सका है।

पारिवारिक खेती की दस विशेषताएं

जान डोय्वे वन दार प्लोएग

यद्यपि कि इस वर्ष अन्तर्राष्ट्रीय पारिवारिक कृषि वर्ष मनाया जा रहा है, तथापि पारिवारिक कृषि को लेकर कुछ भ्रान्तियां अभी भी हैं। जैसे कि : वास्तव में यह है क्या? इसमें अनूठापन क्या है? और औद्योगिक खेती अथवा पारिवारिक कृषि कृषि व्यापार से किस प्रकार भिन्न है? उन स्थानों पर यह भ्रान्ति और भी अधिक है, जहां आधुनिकीकरण के फेर में समाज खेती से दूर होता जा रहा है। अन्तर्राष्ट्रीय पारिवारिक कृषि वर्ष प्रारम्भ होने के अवसर पर जान डोय्वे वन दार प्लोएग कुछ वैचारिक स्पष्टता प्रदान कर रहे हैं। उन्होंने कहा कि पारिवारिक खेती की दुनिया के अन्दर पुरातन व अव्यवस्थित तथा आकर्षक व लुभावनी दोनों स्थितियां मिलती हैं।

किसान उत्पादक संघों ने उपभोक्ता मूल्यों में किसानों की हिस्सेदारी बढ़ाई

पी. नन्दीश, आर. संजीव व आर.एस.एस. हूपर

स्वयं द्वारा गठित उत्पादक संघ के माध्यम से मुट्टलुर (प्याज की एक प्रजाति) उगाने वाले किसानों की हिस्सेदारी उपभोक्ता मूल्यों में बढ़ रही है। व्यवसायियों के शोषण की समस्या का समाधान करते हुए नये बाजारों की खोज, समय से ऋण व गुणवत्ता पूर्ण बीजों की उपलब्धता आदि सभी के कारण ये किसान संगठित गतिविधि एवं वचन बद्धता के माध्यम से अधिकाधिक लाभ प्राप्त कर रहे हैं।

यह अंक...

अन्तर्राष्ट्रीय पारिवारिक खेती वर्ष के अवसर पर पारिवारिक खेती पर केन्द्रित लीज़ा जून का यह अंक आपके सामने प्रस्तुत है। इस अंक में मुख्यतः उन लेखों को समाहित करने का प्रयास किया गया है, जो पारिवारिक खेती की अवधारणा को और दृढ़ करने की दिशा में सहायक है, साथ ही खाद्य सुरक्षा हेतु उपज बढ़ाने की दृष्टि से उपयोगी लेखों को भी समाहित किया गया है।

पत्रिका का पहला लेख आर. मनिकान्दन, सुभाषिनी श्रीधर, आर. अवर्ना थयावथी व के. विजयलक्ष्मी द्वारा लिखित ''उत्पादक व टिकाऊ पारिवारिक खेती'' है, जिसमें एक किसान द्वारा अपने खेत में विविध प्रयोग, पारम्परिक ज्ञान व स्थानीय संसाधनों के प्रयोग से खेती को लाभप्रद बनाने की कहानी है, तो दूसरा लेख ''श्री विधि के विस्तार से और भी सुनहरा होता गेहूँ'' जो श्री रवि चोपड़ा व देबाशीष सेन द्वारा लिखित है। इस लेख में एस.आर.आई. विधि का प्रयोग अन्य फसलों पर करने के बेहतर परिणामों को प्रदर्शित किया गया है। तीसरा लेख ''उन्नत प्रयासों से सीखना'' भी एस.आर.आई. विधि से की जाने वाली खेती की अच्छाईयों एवं इसके विस्तार के प्रयासों में सहयोग देने वाली संस्था एस.डी.टी.टी. के ऊपर आधारित है, जो बिश्वनाथ सिन्हा एवं तुषार दास द्वारा लिखित है। श्री अनिबर्ता विश्वास ने ''ज्ञान मंच (नेटवर्किंग) एस.आर.आई.–भारत गूगल समूहों'' नामक संक्षिप्त लेख के माध्यम से एस.आर.आई. एवं अन्य नवीन कृषिगत जानकारियों के प्रसार में ई–नेटवर्किंग की भूमिका को रेखाकिंत किया है।

पत्रिका का चौथा लेख जान डोय्वे वन द्वार प्लोएग का है, जिसमें उन्होंने पारिवारिक खेती की विशेषताओं एवं उसके लाभों को परिभाषित किया है, जबकि पांचवा लेख पी. नन्दीश, आर.संजीव व आर.एस.एस. हूपर द्वारा लिखित ''किसान उत्पादक संघों ने उपभोक्ता मूल्यों में किसानों को हिस्सेदारी बढ़ाई'' नामक लेख है, जिसमें उन्होंने यह बताया है कि कैसे संगठित होकर किसान बिचौलियों से छुटकारा पाते हुए अपने उत्पादों का अच्छा मूल्य प्राप्त कर रहे हैं।

उपरोक्त सभी लेख किसानों के अनुभवों पर आधारित हैं और सही मायनों में खेतिहर परिवार की खाद्य व आजीविका सुरक्षा करने की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

आशा है, पत्रिका के लेख आपके व आप द्वारा की जा रही गतिविधियों के लिए सहयोगी सिद्ध हो सकेंगे।

पत्रिका पर बहुमूल्य सुझावों की प्रतीक्षा में ...

• सम्पादक मण्डल

उत्पादक व टिकाऊ पारिवारिक खेती

आर. मनिकान्दन, सुभाषिनी श्रीधर,
आर. अवर्ना थयावथी व के. विजयलक्ष्मी

तालाब के ऊपर मुर्गी पालन

एक व्यवस्थित तंत्र के साथ चक्रीय व्यवस्था का स्वयं दुहराव करते हुए संसाधनों, समय व ऊर्जा के पर्याप्त उपयोग को संभव बनाया जा सकता है। पौधों व जानवरों दोनों के सन्दर्भ में प्रजातियों के सावधानीपूर्वक चयन, स्थान एवं संसाधनों के पर्याप्त प्रभावी उपयोग व उचित चक्रीय प्रक्रिया से न केवल तंत्र में स्थाईत्व व लचीलेपन की वृद्धि होगी, वरन् इससे खेती की आमदनी में भी वृद्धि हो सकेगी। तमिलनाडु के एक किसान श्री थिलागर ने इसे सिद्ध कर दिखाया है।

तमिलनाडु राज्य के नगापट्टीनम जिले में अवस्थित श्रीकाजी तालुक के नमेली गांव में रहने वाली किसान श्री थिलागर की आजीविका का मुख्य स्रोत खेती है। इनके पास सात एकड़ खेत है, जिसके द्वारा ये अपने परिवार का भरण–पोषण करते हैं। वर्ष 2002 से इन्होंने खाद्य उत्पादन की स्थाई विधि के साथ प्रयोग करना प्रारम्भ किया और तबसे इसे अपनाते चले आ रहे हैं। प्रारम्भ में इन्होंने रसायनिक उर्वरकों के प्रयोग को तो घटाया, लेकिन निरन्तर मार्गदर्शन एवं जैविक कृषिगत पद्धति हेतु उपयुक्त सुझाव के अभाव में ये रसायनिक उर्वरकों के प्रयोग को पूर्णतया बन्द करने का साहस नहीं जुटा पाये। ये खेती के साथ कोई जोखिम इसलिए भी नहीं लेना चाहते थे, क्योंकि वही इनके परिवार की आमदनी का एकमात्र सहारा था।

खेत पर जैव विविधता को पोषित करना

रसायनिक खेती से जैविक खेती की ओर अग्रसर होने की प्रक्रिया वास्तव में वर्ष 2006 से प्रारम्भ हुई, जब इनका जुड़ाव सी.आई.के.एस. नामक संस्था के साथ काम करने वाले किसान समूह के साथ हुआ। सी.आई.के.एस. एक स्वैच्छिक संगठन है, जो स्थाई कृषि एवं सम्बद्ध तकनीकों को बढ़ावा देते हुए खेतिहर समुदाय को सशक्त बनाने का कार्य कर रही है। पौधों, जानवरों व प्रकृति से प्रेम करने वाले थिलागर प्रारम्भ में कुछ ही फसलों जैसे धान, चना, मूंग, सब्ज़ियों आदि की खेती तक ही सीमित थे।

थिलागर का कहना है *''स्थानीय स्तर पर बीज की पारम्परिक प्रजातियों को अपनाना ही एक किसान की सच्ची पूंजी है और यह प्रत्येक किसान का कर्त्तव्य है कि वह जितना संभव हो सके अधिक से अधिक इन पारम्परिक प्रजातियों के बीजों का संरक्षण करे।''* अपने खेत में वह धान की चार पारम्परिक प्रजातियों सिरगा सांभा, मैपीलाई सांभा, थनगा सांभा व थूयामाली को बीज संरक्षण के उद्देश्य से उगाते हैं। यद्यपि कि व्यवसायिक दृष्टिकोण से वे रबी ऋतु में थलाडी में सफेद पोन्नी एवं खरीफ ऋतु में कुरूवई में एडीटी–43 उगाते हैं। औसतन, खरीफ धान से वे रू0 1.26 लाख तथा रबी धान से रू0 1.5 लाख की आमदनी प्राप्त करते हैं। रबी ऋतु के दौरान धान के बाद वह अपने छ एकड़ में चना की बुवाई कर देते हैं और उससे उन्हें शुद्ध रूप से रू0 50000.00 की आमदनी हो जाती है। वह अपने सभी उत्पादों को श्रीकाजी में स्थापित 'श्रीकाजी जैविक किसान संघ' को बेच देते हैं, जहां उन्हें बाजार की तुलना में अच्छा मूल्य प्राप्त होता है।

अपने खेत के पूरे परिक्षेत्र के पाँच प्रतिशत भाग में वे सब्ज़ियों की खेती करते हैं और उसमें सभी प्रकार की मौसमी सब्ज़ियों को उगाते हैं। प्रत्येक दिन औसतन वे विभिन्न प्रकार की कुल 5 किग्रा0 सब्ज़ियों की तुड़ाई कर उन्हें बेचते हैं, जिससे उन्हें प्रति वर्ष लगभग

रू0 18000.00 की आमदनी हो जाती है। इन्होंने अपने खेत पर आम, अमरूद, सपोता, अनार, मोरिंगा, नारियल, गूजबेरी, केला, पपीता और नीबू आदि विविध प्रकार के फलदार वृक्ष भी लगा रखे हैं। इसके साथ ही विविध अन्य बहुउपयोगी वृक्ष प्रजातियां जैसे– सागौन, ग्लीरिसीडिया, सुबबूल, नीम भी इनके खेत में लगे हैं। बीमारियों एवं कीट नियन्त्रण के लिए खेत की मेड़ों पर विविध प्रकार के पौधे जैसे– केलोट्रापिस, अदाथोडा, लन्ताना, वाइटेक्स भी इन्होंने लगा रखे हैं।

अपने खेत पर विविध प्रकार के अवयवों को शामिल कर थिलागर इस बात से निश्चिन्त हैं कि एक अवयव से दूसरे अवयव के भोजन की आवश्यकता पूर्ति होगी और विभिन्न खेत अवयवों का यथोचित समन्वयन भी यही है।

खेत पर विभिन्न अवयवों का समन्वयन

जैविक कृषि पद्धति को अपनाकर थिलागर अपने खेत की फसलों, सब्ज़ियों और वृक्षों से अच्छा उत्पादन प्राप्त कर रहे थे। फिर भी, उनका मूल मन्तव्य विविध अवयवों जैसे– फसलों की खेती, गृहवाटिका, मुर्गी पालन, मत्स्य पालन, जानवर एवं बकरी पालन में समन्वयन को अपनाते हुए स्थाईत्व की ओर बढ़ना था। यह जानना रोचक होगा कि उन्होंने किस प्रकार अपने प्रक्षेत्र पर विविधता को शामिल किया।

थिलागर ने अपने धान के खेत की सिंचाई नजदीक में ही खोदे गये बोरवेल से किया। जल परीक्षण करने पर इन्होंने पाया कि यह अम्लीय है और इससे धान की फसल प्रभावित हो रही है। ध्यातव्य है कि नमेली गांव समुद्र तट से 25 किमी0 की दूरी पर बसा हुआ है और पिछले अनेक वर्षों से बोरवेल के माध्यम से भूमिगत जल का अधिकाधिक दोहन होने की वजह से जलस्तर अम्लीय हो गया है। जल शोधन एवं अम्लता दूर करने के क्रम में, थिलागर ने सरकारी कृषि प्रौद्योगिकी विभाग, श्रीकाजी से अनुदान प्राप्त कर एक तालाब की खुदाई की। इस तालाब को उन्होंने बोरवेल चलाकर पानी से भर दिया और दो दिनों के पश्चात् उस पानी से धान के खेत की सिंचाई की।

खेत के साथ ही बना तालाब मछली पालन के लिए भी एक आदर्श परिस्थिति उत्पन्न कर रहा था। थिलागर ने पांच विविध प्रकार की मछलियों जैसे कतला, मृगल, रोहू आदि के साथ मत्स्यपालन का काम शुरू किया। सिवाय एक किग्रा0 अजोला प्रतिदिन देने के अतिरिक्त वह इन मछलियों को अलग से कोई विशिष्ट भोजन नहीं देते थे। प्रत्येक वर्ष, वह मछली के 1000 बच्चों को तालाब में डालते थे। औसतन, प्रतिवर्ष उन्हें 750 किग्रा0 मछलियां प्राप्त होती थीं, जिन्हें वह रू0 100.00 प्रतिकिग्रा0 की दर से बेचते थे। इस प्रकार, लचीलापन व निश्चितता की भावना को अपनाते हुए थिलागर एक से अनेक विकल्पों की ओर बढ़े।

तालाब से 5 फीट की ऊँचाई पर 10 फीट चौड़ा, 16 फीट लम्बा व 8 फीट उंचा का एक पिंजरानुमा ढांचा तैयार किया गया, जिसमें 14देशी मुर्गे व 18 सफेद लेगन मुर्गों को पाला जा सके। उन्होंने धान, अनाज, धान की भूसी आदि से मुर्गियों का भोजन तैयार किया। इसके अतिरिक्त, हरा चारा जैसे– बबूल, मोरिंगा और अजोला को भी मुर्गियों के भोजन में शामिल किया। अण्डों व मुर्गों की बिक्री से उन्हें प्रतिवर्ष लगभग 10000.00 रूपये की आमदनी हो रही है।

एकीकृत फसल पद्धति के उपर किसानो के साथ चर्चा करते थिलागर

मुर्गियों का अपशिष्ट सीधा तालाब में गिरता है और उससे मछलियों को भी पोषण मिलता है साथ ही इसी पानी से खेत की सिंचाई भी हो रही है।

थिलागर ने अपने यहां देशी एवं संकर प्रजाति की गायों का भी पालन किया है। गायों के गोबर का उपयोग वर्मीकम्पोस्ट एवं बायोगैस में किया जा रहा है। बायोगैस संयंत्र से निकलने वाला बेकार जल एवं जानवर बांधने की जगह से गाय का मूत्र एक नाली के रास्ते तालाब में डाला जाता है तथा बायोगैस संयंत्र से निकलने वाला अपशिष्ट भी तालाब में डाल दिया जाता है। इससे न केवल सिंचाई हेतु उपलब्ध जल की पौष्टिकता बढ़ती है, वरन् मछलियों को बढ़ने के लिए पोषक तत्व भी मिलते हैं। गायें 10–13 लीटर दूध प्रतिदिन देती हैं, जिन्हें घर की आवश्यकताएं पूरी होने के बाद बाजार में रू0 20.00 प्रति लीटर की दर से बेच दिया जाता है।

एक दूसरे ऊँचे पिंजरेनुमा ढांचे में देशी प्रजाति की 6 बडी एवं 10 बच्चा बकरियों का पालन किया जा रहा है, जिन्हें ''थालाचेरी'' कहते हैं। यह ऊँचा पिंजरा बकरियों को सुरक्षा प्रदान करने के साथ ही उनको स्वस्थ भी रखता है। बकरियां खेत के चारों तरफ लगे वृक्षों से गिरने वाली पत्तियों को खाती हैं एवं उनका अपशिष्ट खेत के लिए खाद का काम करता है। बकरियों एवं बच्चों को बेचने से थिलागर को सालाना रू0 50000.00 की आमदनी हो रही है। तालाब के चारों तरफ बने बन्धे पर चारा घास का रोपण दो उद्देश्य से किया गया– एक तो इससे बन्धे मजबूत बने रहेंगे, दूसरे जानवरों को चारा भी मिलता रहेगा। हरा चारा फसलों जैसे –सीओ3, सीओ4, ग्लिसीरिडिया, बबूल आदि की खेती जैविक विधि से कर उनका प्रयोग जानवरों के खाने के लिए किया जाता है। इससे जानवर स्वस्थ बने रहते हैं।

स्थाईत्व की सुनिश्चिता

अपने खेत पर अनेक प्रकार के अवयवों को जोड़ते हुए थिलागर ने यह सुनिश्चित किया है कि प्रत्येक अवयव एक–दूसरे की भोजन की आवश्यकता को पूरा करें। इस प्रकार उन्होंने अपने खेत पर विविध अवयवों का यथोचित समन्वयन किया है। फसल अवशेष एवं मेड़ों पर उगाये गये चारा से जानवरों की भोजन की आवश्यकता पूर्ति होती है, जानवरों के गोबर से बना खाद पुनः खेत में चला जाता है। समय बीतने के साथ, जैविक खाद, वर्मी कम्पोस्ट, जैव उर्वरकों,

शेष भाग पृष्ठ 9 पर.....

श्री विधि के विस्तार से और भी सुनहरा होता गेहूँ

रवि चोपड़ा व देबाशीष सेन

पीपुल्स साइंस इन्स्टीच्यूट ने सबसे पहले रबी ऋतु 2006–07 के दौरान गेंहूं की खेती में श्री विधि का उपयोग किया। किसानों के खेत पर व्यवस्थित तरीके से प्रारम्भ किये गये सघन गेंहू प्रणाली शोध परीक्षण का विस्तार आज बहुत से भारतीय राज्यों में पीपुल्स साइंस इन्स्टीच्यूट एवं अन्य स्वैच्छिक संगठनों के प्रयास से हो चुका है।

हिमाचल प्रदेश के हमीरपुर जिला स्थित गांव धारगोड बाली गांव में रहने वाले किसान श्री पारस राम 5 कैनाल (लगभग 2000 वर्ग मीटर) क्षेत्रफल में वर्ष 2011–12 के रबी ऋतु में सघनता प्रणाली से गेंहू की खेती करने के लिए तैयार हुए और प्राप्त परिणामों से वे तथा उनके अनुगामी किसान बहुत उत्साहित हुए। उन्होंने 980 किग्रा0 गेंहूं प्राप्त किया, जबकि इससे पहले उसी खेत में मात्र 640 किग्रा0 गेंहूं की उपज होती थी। पारस राम का कहना है कि ''इस वर्ष हमने अपने परिवार की खाद्य आवश्यकता पूरी करने के लिए बाजार से सिर्फ 300 किग्रा0 गेंहूं खरीदा, जबकि इससे पहले हमें 600 किग्रा0 गेंहूं खरीदना पड़ता था। वर्तमान रबी ऋतु में, उन्होंने यह निर्णय लिया है कि अब वे दुगुने क्षेत्रफल, 10 कैनाल में इस विधि से गेंहूं की खेती करेंगें और उन्हें उम्मीद है कि इस विधि से खेती करने पर उतना उत्पादन होगा, जितना पहले वे 15 कैनाल से अनाज प्राप्त करते थे। आगे वे कहते हैं कि ''अब मैं एक टैक्सी लेकर उसे अधिक समय तक चला सकूंगा, जिससे मेरी आमदनी बढ़ेगी।'' इस विधि से खेती करने वाले सिर्फ पारस राम ही नहीं हैं, वरन् बहुत से अन्य किसान भी गेंहूं बुवाई की सघन विधि अपना रहे हैं।

एस.आर.आई. से एस.डब्ल्यू.आई. तक

हिमाचल प्रदेश व उत्तराखण्ड में खेत के छोटे–छोटे टुकड़े एवं पहाड़ी खेतों में उत्पादकता दर कम होने की वजह से ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करने वाले अधिकांश ग्रामीण परिवार बाजार से अनाज खरीदने को विवश हैं। धान व गेंहूं यहां की मुख्य फसल होने के कारण इन फसलों की उत्पादकता बढ़ाना यहां की प्रमुख आवश्यकता है। देहरादून में स्थित एक गैर सरकारी शोध व विकासात्मक संगठन, पीपुल्स साइंस इन्स्टीच्यूट ने वर्ष 2006 में, इन पहाड़ी राज्यों में खाद्य व आजीविका सुरक्षा बढ़ाने हेतु एक क्षमतावान माध्यम के रूप में एस.आर.आई. विधि की पहचान की। वर्ष 2006 के खरीफ ऋतु में धान के खेत में इसे प्रदर्शन के रूप में लगाया गया और यह पाया गया कि अनाज तथा भूसा उत्पादों को बढ़ाने की दृष्टि से यह विधि अधिक प्रभावी सिद्ध हो सकती है। एस. आर.आई. विधि से की गयी खेती में फसलों के डण्ठल बड़े–बड़े होते हैं, जिससे जानवरों को अधिक चारा उपलब्ध होगा। नतीजतन एक तरफ तो जानवरों के दुग्ध उत्पादन में वृद्धि होगी, तो दूसरी तरफ खेत में खाद डालने के लिए खेत से अपशिष्टों का उत्सर्जन भी अधिक होगा। धान की खेती में अपनाये गये इस एस.आर.आई. विधि के प्रदर्शन से प्राप्त परिणामों से उत्साहित संस्था ने इस विधि को गेंहू की खेती में अपनाने का निश्चय किया और उसी तर्ज पर इसे एस. डब्ल्यू.आई. की संज्ञा दी।

एस0आर0आई0 विधि से गेहूं की खेती करते किसान

तालिका 1 : विभिन्न बुवाई विधियों एवं एस.डब्लू.आई. से उत्पादित अनाज व भूसा का तुलनात्मक विवरण

मानक	पारम्परिक तरीका छिंटकवा पद्धति	सीड ड्रिल के साथ पंक्ति बुवाई	हल के पीछे पंक्ति बुवाई	एस.डब्लू.आई. 1		एस.डब्लू.आई. 2	
पंक्ति की दूरी (सेमी० में)		25	25	25 × 25		20 × 20	
बीज से बीज की दूरी (सेमी० में)				25 × 25		20 × 20	
बीजों/ छिद्रों की संख्या				1	2	1	2
कल्लों/ पौधों की संख्या	2	4	1	9	11	11	8
पौधों की औसत ऊँचाई (सेमी० में)	63	66	67	71	67	68	67
डण्ठल की औसत लम्बाई (सेमी० में)	8.8	9.2	8.4	11.2	11	11.8	10.8
अनाज/भूसा का औसत उत्पादन	45	49	48	62	59	65	53
अनाज उत्पादन (टन/हेक्टेयर)	2.0	3.5	3.0	4.4	4.2	5.3	5.0
भूसा (टन/हेक्टेयर)	3.0	4.8	3.8	8.0	6.7	8.0	6.7

गेंहू में इस विधि का पहला परीक्षण वर्ष 2006–2007 के रबी ऋतु में संस्था ने स्वयं अपनी चहारदीवारी के अन्दर भूमि पर किया। दो प्रजातियों– एच.डी. 2329 व पी.बी.डब्ल्यू. 396 की बुवाई अलग–अलग की गयी और इस बुवाई के दौरान लाइन से लाइन की दूरी तथा पौध से पौध की दूरी का ख्याल रखा गया। चिन्हित अन्तराल पर केवल एक–एक बीज की बुवाई की गयी तथा दो बार सिंचाई की गयी। बुवाई के 30 एवं 45 दिनों बाद फसल पर पंचगव्य का छिड़काव किया गया, जिससे खर–पतवार नष्ट हो गये। पंचगव्य जानवरों के पांच उत्पादों– दूध, योघार्ट (Yoghrt) स्वच्छ मक्खन, गौमूत्र और गोबर से मिलकर बना एक जैविक द्रव्य है, जो खर–पतवार नाशी का काम करता है।

परम्परागत तरीके तथा एस.डब्ल्यू.आई. पद्धति से खेती का तुलनात्मक अध्ययन किया गया और पाया गया कि एच.डी. 2329 प्रजाति के पारम्परिक प्रक्षेत्र से 1700 किग्रा0 प्रति हेक्टेयर गेंहूं उत्पादन की तुलना में एस.डब्ल्यू.आई. प्रक्षेत्र से 2300 किग्रा0 प्रति हेक्टेयर अनाज उत्पादित हुआ, जो लगभग 35 प्रतिशत अधिक है। इसी प्रकार पी.बी.डब्ल्यू. 396 का उत्पादन 67 प्रतिशत तक बढ़ा। भूसे का उत्पादन भी 10 से 30 प्रतिशत तक बढ़ा है। करनाल विश्वविद्यालय के प्रोफेसर नारमन उपहाफ, जिन्होंने 50 से भी अधिक देशों में एस.आर.आई. एवं उससे जुड़ी जानकारियों का प्रसार किया, वे कहते हैं – *''देहरादून में पीपुल्स साइंस इन्स्टीच्यूट द्वारा एस.डब्ल्यू.आई. के प्रयोग व अनुकूलन ही दस्तावेजित एस.डब्ल्यू. आई. माध्यम का प्रथम परीक्षण है।''*

यह भी उल्लेख करना आवश्यक है कि एस.डब्ल्यू.आई. न केवल फसल उत्पादकता को बढ़ाता है, वरन् बाहरी निवेशों के अति न्यून उपयोग से खेत की वास्तविक उत्पादकता भी बढ़ती है। इस विधि में स्वस्थ जड़ें तथा अधिक उत्पादक पौधे होना सुनिश्चित था। निश्चित अन्तराल रखते हुए व्यवस्थित तरीके से बीजों की बुवाई होने के कारण पारम्परिक बुवाई विधि की तुलना में एक तरफ तो 60–70 प्रतिशत कम बीज लगा, दूसरे इससे पौधों के बीच प्रतिस्पर्धा भी कम हुई। सभी पौधों को समान मात्रा में सूर्य का प्रकाश, जल, पोषक तत्व आदि मिलने से पौधों में कल्लों की संख्या में वृद्धि हुई और अन्ततः उत्पादन बढ़ा। उपरोक्त परिणामों से संस्था का उत्साहवर्धन हुआ और अब वह उत्तराखण्ड तथा हिमाचल प्रदेश में इस विधि को प्रोत्साहित कर रही है।

पूरक अनुकूलन का शोध

परम्परागत तरीके से सिंचित गेंहूं की खेती की तुलना में एस.डब्ल्यू. आई. विधि के प्रयोग से 80 से 100 प्रतिशत तक अनाजों का उत्पादन बढ़ा है। यहां तक कि वर्षा होने की स्थितियों में भी, एस. डब्ल्यू.आई. की उपज औसतन 50 से 70 प्रतिशत तक बढ़ी है। एक बेहद व्यवस्थित तथा वैज्ञानिक तरीके से इसे प्रोत्साहित करने हेतु संस्था ने विभिन्न परिस्थितियों में भिन्न–भिन्न विकल्पों की खोज करने हेतु किसानों के खेत पर व्यवस्थित शोध परीक्षण करना प्रारम्भ किया। शोध के तहत् निम्न बिन्दुओं को शामिल किया गया –

- बीज से बीज की दूरी तथा पंक्ति से पंक्ति की दूरी को अपनाते हुए बीजों की सीधी बुवाई की गयी।
- पंक्ति से पंक्ति की दूरी को अपनाते हुए पंक्ति से बुवाई की गयी तथा
- सिंचित परिस्थितियों में भिन्न–भिन्न दूरी को अपनाते हुए 15–20 दिन के नर्सरी के पौधों की रोपाई की गयी।

ये परीक्षण दर्शाते हैं कि पंक्ति से पंक्ति तथा बीज से बीज की दूरी 20 सेमी0 रखते हुए अधिकतम अनाज उत्पादित होता है। पी.एस. आई. ने आदर्श एकल व दोहरी पंक्ति सीड ड्रिल्स के साथ एक एस. डब्ल्यू.आई. वीडर विकसित किया, जिसके ऊपर किसानों से मिश्रित प्रतिक्रिया मिली। किसानों की विविध आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए और मृदा उर्वरता का स्तर बनाये रखने के लिए संस्था ने गेंहूं के साथ विभिन्न दलहनी फसलों जैसे चना, मसूर आदि की अन्तः खेती पर भी प्रयोग किये।

एस.डब्ल्यू.आई. का विस्तार

उत्तराखण्ड व हिमाचल प्रदेश के दो पहाड़ी राज्यों में एस.डब्ल्यू. आई. क्रिया को उन्नत बनाने का कार्य स्थानीय स्वैच्छिक संगठनों के नेटवर्क के माध्यम से पूरा किया गया। इस नेटवर्क ने स्वयं अपने को तथा खेती में रूचि रखने वाले अन्य किसानों को मास्टर ट्रेनर के रूप में प्रशिक्षित किया और इन अनुभवी किसानों का प्रयोग गांव स्तर पर सन्दर्भ व्यक्ति के रूप में किया गया। वर्ष 2007 में, मात्र 0.3 हेक्टेयर खेत पर 50 किसानों के साथ एस.डब्ल्यू.आई. विधि से गेंहूं की खेती प्रारम्भ की गयी थी, जबकि वर्ष 2011–12 में 12000 से भी अधिक किसानों ने 556 हेक्टेयर क्षेत्रफल में इस विधि को अपनाया।

पहाड़ी क्षेत्रों के किसान एस.डब्ल्यू.आई. में विभिन्न तरीकों के प्रयोग करते हुए उसे अपना रहे हैं। कुछ किसान बुवाई करते समय बीज से बीज तथा पंक्ति से पंक्ति दोनों दूरी को अपना रहे हैं, जबकि अन्य बहुत से किसान सिर्फ पंक्ति से बुवाई कर रहे हैं। किसान एक छिद्र में एक बीज की बजाय दो बीजों की बुवाई को प्राथमिकता दे रहे हैं। उन्होंने निशान लगाने, निराई–गुड़ाई करने और खेत में खाद डालने में भी विभिन्न तरह के नये तरीकों को अपनाया और यह महसूस किया कि एस.डब्ल्यू.आई. में बेहतर परिणाम पाने के लिए विविध क्रियाएं जैसे बुवाई, निराई–गुड़ाई, जल प्रबन्धन आदि समय सीमा के अनुसार होनी आवश्यक हैं। ये सभी क्रियाएं विशेषकर सीड ड्रिल मशीन न होने की स्थिति में अधिक श्रम वाली हैं। बुवाई और निराई गुड़ाई में उच्च श्रम निवेश के बावजूद एस.डब्ल्यू.आई. तकनीक से बहुत अधिक अनाज व भूसा उत्पादन होने के कारण किसानों को अधिक संतोष मिल रहा है। किसान इसके अन्य लाभों जैसे – कम बीज की आवश्यकता, कम सिंचाई के कारण पानी की बचत, उर्वरकों के कम प्रयोग और उन्नत हो रही मृदा गुणवत्ता व मृदा स्वास्थ्य की वजह से इसकी ओर अधिक उन्मुख हो रहे हैं।

वर्ष 2010 में पीपुल्स साइंस इन्स्टीच्यूट ने बुन्देलखण्ड में भी एस.डब्ल्यू.आई. को प्रोत्साहित किया और दो वर्षों के अन्दर ही यहां पर किसानों की संख्या बढ़कर 1015 हो गयी और कुल 48 हेक्टेयर में इस तकनीक से गेंहू की खेती की जाने लगी। मध्य उच्च क्षेत्र में खेतिहर मजदूर आसानी से मिल जाने के कारण पश्चिमी हिमालयन क्षेत्र की तरह यहां पर समय से कृषिगत क्रियाएं सम्पन्न करना कोई चुनौती न थी। अतः यहां पर एस.डब्ल्यू.आई. से अधिक उत्साहजनक परिणाम प्राप्त हुए।

स्थानीय स्वैच्छिक संगठनों, राज्य कृषि विभागों और उनके अधिकारियों, कृषि विज्ञान केन्द्रों, कृषि विश्वविद्यालयों और शोध संस्थानों के साथ जुड़ाव स्थापित कर ही दोनों राज्यों में एस.डब्ल्यू.आई. तकनीक को बड़े पैमाने पर प्रसारित किया जा सका है। सर दोराबजी टाटा ट्रस्ट के वरिष्ठ कार्यक्रम अधिकारी श्री विश्वनाथ सिन्हा कहते हैं कि ''संस्था ने गांवों में एस.आर.आई. सिद्धान्तों के प्रयोग से फसलों की खेती को बड़े पैमाने पर विस्तारित करने के लिए स्थानीय संस्थाओं के नेटवर्क को गतिशील बनाने तथा गांवों में लोगों को प्रशिक्षित करने के माध्यमों को अपनाकर एक माडल तैयार किया है।'' टाटा ट्रस्ट ने सम्पूर्ण भारत में एस.आर.आई. अभ्यासों को प्रोत्साहित करने के लिए 2006 से 2010 के बीच लगभग 30 करोड़ से भी ऊपर खर्च किये हैं।

रास्ते और भी हैं

अब भारत के बहुत से राज्यों, विशेषकर बिहार, छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश, उड़ीसा, पंजाब और उत्तर प्रदेश में एस.डब्ल्यू.आई. तकनीक विस्तारित हो चुकी है। वहीं पीपुल्स साइंस इन्स्टीच्यूट भारत के पश्चिमी हिमालयन और मध्य उच्च क्षेत्रों के कृषिगत परिवारों के बीच अधिक से अधिक खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने हेतु एस.डब्ल्यू.आई. तकनीक को और अधिक लोकप्रिय बनाने के लिए प्रतिबद्ध है। हालांकि वे इसमें आने वाली बाधाओं को भी अच्छी तरह से जानते हैं और इसीलिए संस्था ने बीजों के बीच निश्चित दूरी सुनिश्चित करने के लिए सीड ड्रिल मशीनों का अभाव, गुणवत्तापूर्ण खर पतवारनाशी यंत्रों तक किसानों की पहुंच न बन पाना, वर्षा न होने की परिस्थिति में पानी की अनुपलब्धता तथा एस.डब्ल्यू.आई. को अपनाने में किसानों की अपर्याप्त क्षमता जैसी बाधाओं को प्राथमिकता के आधार पर उठाया है और उनका समाधान करने की दिशा में प्रयासरत है। भारत के विभिन्न कृषि–जलवायुविक क्षेत्रों में एस.डब्ल्यू.आई. तकनीक को विस्तारित करने हेतु एस.डब्ल्यू.आई. अपनाने वाले किसानों के अनुभवों का आदान–प्रदान देश भर में करना एक बेहतर रणनीति बनाने की दिशा में प्रभावी ढंग से सहायक सिद्ध हुआ है।

■

रवि चोपड़ा
पीपुल्स साइंस इन्स्टीच्यूट, 653 इन्दिरा नगर
देहरादून– 248 006
ईमेल : psiddoon@gmail.com
वेबसाईट : peoplesscienceinstitute.org

SRI : A Scaling up Success
LEISA INDIA, Vol. 15, No.1, March 2013

......पृष्ठ 6 का शेष भाग

पंचगव्य आदि के निरन्तर उपयोग तथा हरित खाद, मल्चिंग आदि गतिविधियां अपनाते हुए मृदा गुणवत्ता में उल्लेखनीय परिवर्तन दृष्टिगोचर हो रहे हैं। इसका प्रमाण यह है कि फसल उत्पादन बढ़ रहा है। इनका लागत निवेश निरन्तर ह्रास की ओर है और सबसे बड़ी बात तो यह है कि इनके द्वारा उपयोग किये जा रहे सभी निवेश स्वयं खेत से ही मिल रहे हैं।

थिलागर का खेत एक विशिष्ट पारिवारिक खेत है। कृषि के लिए आवश्यक बहुत से निवेश जैसे बीज, मृदा उर्वरता, प्रबन्धकीय निवेश, कीट एवं व्याधि नियन्त्रण हेतु निवेश ये सभी उनके खेत से उत्पादित हो रहे हैं। इसके साथ ही खेती की लगभग सभी गतिविधियां परिवार के सदस्यों द्वारा ही सम्पन्न की जा रही हैं। उदाहरण के लिए, उनकी पत्नी श्रीमती करपगम कृषिगत गतिविधियों – वर्मीकम्पोस्ट, जैविक कीटनाशक बनाने, जानवरों के रख–रखाव आदि में उनकी सहायता करती हैं। वह खेत पर बहुत से चक्रीय कार्यों को करती हैं, जिससे बाहरी निवेश पर निर्भरता घट रही है। इस प्रकार थिलागर ने दिखा दिया है कि किस प्रकार परिवार द्वारा प्रबन्धित खेत से अच्छा उत्पादन प्राप्त हो सकता है और उससे लगभग 4 लाख रू0 प्रतिवर्ष तक की आमदनी भी हो सकती है। आज थिलागर को ''किसान'' कहलाने पर गर्व है।

विस्तृत जानकारी के लिए श्री थिलागर के मोबाइल नं0 9488215244 पर सम्पर्क कर सकते हैं।

आर० मुनिकन्दन, सुभाषिनी श्रीधर, आर०अवर्ना थूयावथी और के० विजयलक्ष्मी
सेण्टर फॉर इण्डियन नालेज सिस्टम्स नं० 30, गाँधी मन्दपम सड़क, कोट्टूरपुरम्
मद्रास– 600 085
ईमेल : cikskazhi@gmail.com

Strengthening Family Farming
LEISA INDIA, Vol. 15, No.4, December 2013

परिवार की खाद्य सुरक्षा पूरी करने के माध्यम के रूप में एस.आर.आई. प्रदर्शन

उन्नत प्रयासों से सीखना

बिश्वनाथ सिन्हा एवं तुषार दास

लघु एवं सीमान्त किसानों के बीच बड़े पैमाने पर श्री विधि को प्रोत्साहित करने के लिए सामूहिक रूप से विभिन्न प्रयास करने की आवश्यकता है। एस.डी.टी.टी. ने इस पद्धति को अपनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई और यही कारण है कि आज 6 वर्षो बाद इस विधि से की जाने वाली खेती का विस्तार 1.5 लाख किसानों तक हो चुका है। यह सब सहयोगी स्वैच्छिक संगठनों द्वारा खेत में क्रियान्वयन, शोध संस्थानों के साथ मिलकर सामूहिक रूप से किये गये शोध तथा एस.आर.आई. को मुख्य भूमिका में शामिल कराने हेतु राज्य एवं देश स्तर पर सरकारों के साथ व्यापक वार्ता से ही सम्भव हो सका है।

भारत का प्रमुख भोजन चावल है। भारत में धान की खेती लगभग 44 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र में की जाती है, जो सम्पूर्ण विश्व का 2.9 प्रतिशत क्षेत्र है। जबकि, विश्व के चावल पैदावार क्षेत्र में यह दूसरे स्थान पर है, जहां 20 प्रतिशत चावल की पैदावार होती है। हरित क्रान्ति के कारण आधुनिक तकनीक के प्रयोग से चावल की खेती एवं उसके पैदावार में वृद्धि हुई है। साथ ही साथ इसके पैदावार की लागत में भी वृद्धि हुई है। वर्तमान में चावल की उत्पादकता स्थिर है और यह संतृप्ति बिन्दु तक पहुंच गयी है। यदि धान की पैदावार हेतु अतिरिक्त निवेश किया जाये तो इसकी उत्पादकता पर विशेष प्रभाव पड़ने की संभावना नहीं है।

ऐसी स्थिति में आवश्यकता है कि धान की खेती में होने वाले खर्चे को कम किया जाये और इसे पर्यावरण के अनुकूल बनाकर इसकी उपयोगिता वृद्धि स्थाई ढंग से किया जाये। इस दिशा में एस.आर. आई. ही एक ऐसी तकनीक है, जो इस आसन्न स्थिति को समाप्त कर सकती है। एस.आर.आई. एक ऐसी विधि है, जो साधारण खेती के तौर–तरीकों पर आधारित है, जिसे भारत में वर्षों पूर्व अपनाया जा चुका है। इस तकनीक ने विभिन्न प्रकार की नवीन विधियां बनाई हैं, जो गरीब, छोटे एवं सीमान्त किसानों की अनाज की जरूरतों को पूरा करने में सक्षम हैं।

एस.डी.टी.टी. एवं एस.आर.आई.

आजीविका कार्यक्रम के माध्यम से वर्ष 2006 से पूर्व एस.डी.टी.टी. एवं सहयोगी ट्रस्ट द्वारा इस दिशा में की गयी सहभागिता से कार्यक्रम को गति प्राप्त हुई। वर्ष 2007 में सहयोगियों की संख्या बढ़कर 5 हो गयी और लगभग 1100 किसान इससे जुड़ गये।

वर्ष 2008 में डा0 वी0पी0 सिंह जो धान के एक प्रमुख वैज्ञानिक हैं, उन्होंने एक पूर्ण संतुलित एस.आर.आई. तंत्र को प्रोत्साहित किये जाने की वकालत की। लघु एवं सीमान्त किसानों ने वर्षा वाले क्षेत्रों में खाद्य सुरक्षा के मुद्दे को व्यवस्थित करने के उद्देश्य से इस कार्यक्रम की शुरूआत की।

इसका एक दूसरा पक्ष यह भी रहा कि एस.आर.आई. को बड़े पैमाने पर पारिवारिक स्तर पर विस्तारित व खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए राज्य स्तर पर चलाये जाने वाले प्रदर्शन कार्यक्रमों में

एस.आर.आई. माध्यम को स्थापित किया गया। एस.आर.आई. को मुख्य धारा में शामिल करने के लिए प्रभावी नीतियां बनाई गई, एडवोकेसी की गई। विभिन्न प्रतिभागियों के बीच में संवाद स्थापित किया गया तथा नवाचारों को प्रोत्सहित व बढ़ावा दिया गया।

कार्यक्रम का विस्तार

वर्ष 2008 के प्रथम चरण में 8 राज्यों में तीन वर्षों के लिए 10.94 करोड़ के बजट का प्रावधान रखा गया। इन वर्षों में उत्तराखण्ड, महाराष्ट्र, पश्चिम बंगाल, बिहार, झारखण्ड, उड़ीसा, छत्तीसगढ़ और मध्य प्रदेश के 82 जिलों को शामिल किया गया। इस दौरान इस कार्यक्रम में 127 गैर सरकारी संगठन (एन.जी.ओ.) सहयोगियों में माध्यम से लगभग 37 हजार किसान जुड़े। कार्यक्रम के विस्तार को ध्यान में रखते हुए वर्ष 2009 में एस.डी.टी.टी. द्वारा भुवनेश्वर में एक सचिवालय की स्थापना की गयी जिससे एस.आर.आई. कार्यक्रम की गतिविधियों के लिए सहयोगी स्वैच्छिक संगठन के संयोजन से एम.आई.एस. व अन्य शोध परक किया कलापों को गति मिल सके। वर्ष 2009 में 8 राज्यों में चल रहे इस कार्यक्रम का विस्तार करते हुए इसे आसाम और मणिपुर में भी विस्तारित किया गया और इसकी संख्या 10 हो गयी। इन वर्षों में 163 सहयोगी संस्थाओं के माध्यम से 65043 किसानों को जोड़ा गया जिससे इस कार्यक्रम को और अधिक बढ़ाया जा सका। वर्ष 2008 में 0.23 एकड़ आच्छादित क्षेत्र की तुलना में वर्ष 2009 में लगभग 0.23 एकड़ की वृद्धि हुई अर्थात् यह संख्या बढ़कर 0.33 एकड़ पर पहुंच गयी जबकि वर्ष 2009 में खरीफ की फसल वर्षा की कमी से प्रभावित हुई थी तब से अब तक यह कार्यक्रम 105 जिलों में फैल चुका है। वर्ष 2009–2010 के अनुभवों एवं अच्छे परिणामों के आधार पर एस.आर.आई. कार्यक्रम को वर्ष 2010–13 के दूसरे चरण हेतु ट्रस्ट द्वारा विस्तारित कर इसे आगे बढ़ाये जाने का कार्यक्रम बनाया गया।

दूसरे चरण की ओर बढ़ना

दूसरे चरण के कार्यक्रम की शुरूआत वर्ष 2010 में 23.91 करोड़ रूपये के बजट प्रावधान से तीन वर्षों तक के लिए की गयी। इस चरण में 11 राज्यों में यह कार्यक्रम चलाया गया। इस चरण में उत्तर प्रदेश को भी शामिल किया गया। द्वितीय चरण के कार्यक्रम को इस उद्देश्य के साथ प्रारम्भ किया गया कि वंचित समुदाय की स्थिति में सुधार हो सके एवं राज्य स्तर पर इसकी पैरवी प्रभावी ढ़ंग से की जा सके जिससे एस.आर.आई के सिद्धान्तों को अन्य फसलों पर भी लागू किया जा सके।

वर्ष 2010 में कार्यक्रम के द्वितीय चरण के प्रारम्भ में 109 जिलों के 90436 किसानों को 143 संस्थाओं के माध्यम से जोड़ा गया। वर्ष 2011 में किसानों की यह संख्या बढ़कर 150082 हो गयी एवं 47247 एकड़ का क्षेत्र लाभान्वित हुआ। उत्तरोत्तर प्रगति करते हुए वर्ष 2012 में खरीफ के समय यह कार्यक्रम 128229 किसानों तक पहुचा जिसके माध्यम से 69093 एकड़ का क्षेत्र लाभान्वित हुआ। इस दौरान 6 राज्यों में 65 सहयोगी संस्थाएं शामिल हुई। वर्षवार विस्तृत क्षेत्र एवं कार्यक्रम का विवरण टेबल संख्या 1 में दिया गया है।

एस.आर.आई. विधि को अपनाने की दिशा में काफी हद तक प्रसार हुआ है और यह सहयोगी संस्थाओं एवं कृषकों की भागीदारी से निश्चित रूप से कम लागत द्वारा ही संभव हो सका है। गेहूं, रागी, सरसो, गन्ना, दाल और सब्ज़ियों की खेती में एस.आर.आई. के समस्त सिद्धान्त अथवा आंशिक विधि के अपनाने से इन क्षेत्रों में फसलों की उत्पादकता में काफी हद तक वृद्धि हुई है। कृषकों द्वारा प्रयोग में लायी गयी विधियो को एक पुस्तिका में अंकित करते हुए एस.आर.आई. के सिद्धान्तों के साथ बढ़ती हुई फसलों के रूप में दस्तावेजित भी किया गया।

वर्ष 2010 में खरीफ की फसलों के सम्बन्ध में किये गये अध्ययन के अनुसार एस.आर.आई. विधि अपनाने के कारण अनाजों की उत्पादकता में तुलनात्मक रूप से वृद्धि हुई है। परम्परागत विधियों द्वारा इस वर्ष (4.68 /हे0) 38.87 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई, जो राष्ट्रीय औसत की तुलना में (3.23 /हे0) 44.89 प्रतिशत अधिक हुई, जबकि परम्परागत विधि में यह मात्र (3.69 /हे0) रही थी। भारत के 7 प्रमुख कृषि जलवायुविक क्षेत्र वाले 8 राज्यों के 5000 किसानों पर भी एक अध्ययन किया गया। उपयुक्त उत्पादकता वाले परम्परागत खेती के सिद्धान्त के विपरीत एक साधारण 6 व्यक्तियों वाले परिवार में जहाँ चावल की खपत 2.5 किग्रा प्रतिदिन रही, यहां 0.5 एकड़ वाले खेत में एस.आर.आई. विधि द्वारा 69 दिवस हेतु खाद्य सुरक्षा प्राप्त हुई। इसी प्रकार वर्ष 2009 में खरीफ के दौरान किये गये एक अन्य अध्ययन में 7 राज्यों के 482 खेतों में यह पाया गया कि एस.आर.आई. विधि अपनाने से पानी की कमी के कारण भी परम्परागत ढंग से की जाने वाली खेती की तुलना में एस.आर.आई. विधि द्वारा उच्च कोटि का परिणाम प्राप्त हुआ।

खेत पर शोध

एस.आर.आई. कार्यक्रम के विस्तार को राज्य कृषि विश्वविद्यालयों और सहयोगी संस्थाओं के शोध कार्यों के माध्यम से खेती की उत्पादकता के क्षेत्र में अधिक बल मिला है। वर्ष 2009 में किये गये शोध योजनाओं के कार्यक्रमों द्वारा विभिन्न वैज्ञानिकों एवं विशेषज्ञों

तालिका 1 : कार्यक्रम आच्छादन

विवरण	2006–07	2007–08	2008–09	2009–10	2010–11	2011–12	2012–13
आच्छादित राज्य	2	7	8	10	11	11	6
आच्छादित जिले	14	18	82	104	109	94	67
सहभागियों की संख्या	2	5	127	161	143	127	65
किसानों की संख्या	11000	14000	37,000	65,043	90,436	150,082	128,229
कुल क्षेत्रफल (एकड़ में)	–	–	8,140	21,544	27,184	47,247	69,093
औसत आच्छादित क्षेत्रफल (एकड़ में)	–	–	0.22	0.33	0.30	0.31	0.54

गेहूँ में एस.आर.आई. सिद्धान्तों का प्रदर्शन

ने इस दिशा में सार्थक हस्तक्षेप किया। विभिन्न कृषि जलवायुविक क्षेत्रों में 6 सहयोगी संस्थाओं द्वारा शोध योजनाओं को लागू किया गया। शोध के क्षेत्र में कार्यरत किसानों की दक्षता को भी विशेष तौर पर आँकने हेतु एस.आर.आई. के सचिवालय, सहयोगी संस्थाओं और स्थानीय कृषि वैज्ञानिकों ने इनके कार्यों की समीक्षा की।

कृषि के क्षेत्र में शोध के अतिरिक्त 2011 में ट्रस्ट ने विद्यानचन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, पश्चिम बंगाल द्वारा विभिन्न केन्द्रों पर एस.आर.आई. के माध्यम से शोध कार्य आयोजित कराये साथ ही साथ एस.आर. आई. के माध्यम से जमीन की सूक्ष्म पोषक तत्व की स्थिति को भी सुधारा गया। बिहार के मैदानी क्षेत्रों में गेहूं और धान की खेती तथा उत्तराखण्ड के पहाड़ों में इस दिशा में की जा रही खेती को भी शोध कार्य में शामिल किया।

मुख्य धारा में लाने हेतु पहल

ट्रस्ट का प्रमुख उद्देश्य है कि सरकारी कार्यक्रमों में एस.आर.आई. की भूमिका प्रमुख रूप से शामिल हो। इस दिशा में सहयोगी संस्थाओं द्वारा प्रतिभागिता करते हुए विविध राज्य सरकारों को प्रेरित किया जाना शामिल है। बिहार, झारखण्ड और उड़ीसा के राज्यों की सरकारों के एस.आर.आई. के क्षेत्र में किये जा रहे कार्य सराहनीय हैं। इसी प्रकार मणिपुर और छत्तीसगण सरकारों ने इस कार्यक्रम को प्रोत्साहित करते हुए किसानों के साथ धान उपजाने की दिशा में मित्रवत व्यवहार अपनाया है।

एस.डी.टी.टी. की सफलता का प्रमुख आधार एस.आर.आई. को बढ़ावा और नाबार्ड का विशेष प्रोत्साहन इस दिशा में अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। नाबार्ड ने एस.डी.टी.टी. एस.आर.आई. विधि को गैर सरकारी संस्थाओं के माध्यम से वर्ष 2010 में 16 करोड़ रू0 की सहयोग से किसानों में इसे अत्यन्त प्रभावी ढंग से 3 वर्षों में इसे लागू कराया। एस.आर.आई. विधि से धीरे–धीरे आगे बढ़ने के कारण अधिक से अधिक किसानों ने इसमें आपसी रूचि प्रकट की और इस तरह एस.आर.आई. ने देश के किसानों के बीच लोकप्रियता हासिल की।

वर्ष 2009 में एस.डी.टी.टी. व एस.आर.आई. इण्डिया ग्रुप के माध्यम से जानकारी का आदान–प्रदान करने हेतु प्रमुख एस.आर.आई. विशेषज्ञ, प्रतिष्ठित अध्येता और शोधार्थियों ने गठित साइबर फोरम में सक्रिय भागीदारी की। इस ई–ग्रुप में वर्तमान में प्रतिभागियों की संख्या 500 हो गयी है, जो देश के विभिन्न भागों में एस.आर.आई. अभियान को अपने अनुभवों एवं जानकारियों के आधार पर लोगों को पहुंचा रहे हैं। एक पाक्षिक पत्रिका के माध्यम से लोगों द्वारा किये गये कार्यों, अनुभवों और आपसी परिचर्चा को सारांश रूप में प्रकाशित भी किया जा रहा है।

एस.आर.आई. बढ़ाने के बाहरी प्रयासों से सीखना

1. एस.आर.आई. कार्यक्रम को और अधिक विस्तारित किये जाने की दिशा में राज्य स्तरीय नोडल एजेन्सी अधिक प्रभावी होगी। पीपुल्स साइंस इन्स्टीच्यूट, प्रदान, सोसाइटी फार प्रमोशन आफ वाटरशेड डेवलपमेण्ट, रांगमेई नगा बापिस्ट एसोसियेशन, राजरहाट प्रसारी व सेण्टर फार वर्ल्ड सालिडेरिटी जैसी संस्थाओं ने अपने साथ जुड़ी कई छोटी–छोटी संस्थाओं के माध्यम से एस.आर.आई. को विस्तारित किया है।
2. सामाजिक संगठनों की स्वीकार्यता से आगे जाकर केन्द्र व राज्य स्तर पर एस.आर.आई. को स्वीकार्य बनाने हेतु नीतियों पर कार्य करना अत्यन्त कठिन है। नागर समाज संगठनों ने ट्रस्ट के वित्तीय सहयोग से इसे अपनाने हेतु बहुत से पहल किये हैं व इसे और अधिक विस्तारित करने की दिशा में राष्ट्रीय कृषि विकास योजना तथा किसानों से किसानों तक हस्तान्तरण की तकनीक जैसी सरकारी योजनाएं / कार्यक्रम बेहद प्रभावी हुए हैं।
3. चूँकि एस.आर.आई. शुद्ध तकनीक के अतिरिक्त अधिक जानकारियों पर आधारित प्रणाली है। इसलिए यहां इसके उपयोग करने की दिशा में विभिन्न प्रयोग किये जाने की सम्भावना भी अधिक है। एस.आर.आई. की यात्रा और इसमें अधिक से अधिक प्रयोग किये जाने के कारण विभिन्न क्षेत्रों में कई सफल कार्यक्रमों का विस्तार भी हुआ है। जैसे एस.आर.आई. पद्धति से यदि ग्राम्य सन्दर्भ व्यक्ति जुड़ता है, तो सीधे 50–60 किसानों का जुड़ाव हो जाता है। एक स्थानीय कुशल प्रसार कार्यकर्त्ता 15–20 ग्राम्य सन्दर्भ व्यक्तियों के साथ कार्य करता है। इस प्रकार लगभग 750–1200 किसान विभिन्न इलाकों व समुदायों में कार्य करने में विशेष भूमिका निभाते हैं। इसी प्रकार एक विषय वस्तु विशेषज्ञ द्वारा 3 कुशल प्रसार कार्यकर्त्ताओं की देख–रेख की जाती है, गुणवत्ता नियंत्रण और कुशलता में वृद्धि होती है। इस प्रकार एस.आर.आई. कार्यक्रम के माध्यम से कृषि क्षेत्र में विभिन्न स्तरों पर प्रसार होता है। बिहार सरकार ने इस कार्यक्रम को राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन योजना में सम्मिलित कर लिया है।
4. छोटे व सीमान्त किसान, जिनके पास संसाधनों की कमी है और वर्षा की स्थितियाँ ठीक नहीं हैं, उनके बीच में एस.आर.आई. की लोकप्रियता में काफी हद तक वृद्धि हुई है। जब तक एस.आर.आई.के माध्यम से गरीब किसान को इसका प्रतिफल नहीं मिलता, तब तक वह एस.आर.आई. को एक बड़ी चुनौती के रूप में मानकर अपने कार्य को जारी रखता है। यह पद्धति सीमान्त किसानों के लिए भी इसी प्रकार से कार्य करती है। एक महत्वपूर्ण बिन्दु यह भी पाया गया कि किसान एस.आर.आई. के स्थाई कार्यक्रम व उसकी सार्थकता से पूरी तरह सहमत हुए हैं।
5. तकनीक में निरन्तर किये गये सुधार एवं खोज ने एस.आर.आई. के माध्यम से खर–पतवार नाशी एवं मार्करों को स्थानीय स्तर पर उचित मुल्य पर उपलब्ध कराया है। कृषि ग्राम्य विकास केन्द्र, झारखण्ड तथा अन्तर्राष्ट्रीय विकास उपक्रम, भारत की सहभागिता से यह और अधिक लाभप्रद सिद्ध हुआ है।

आगे रास्ते और हैं

ट्रस्ट ने कृषि एवं प्रबन्धन विशेषज्ञों के दल द्वारा प्राप्त सुझावों एवं जानकारियों के आधार पर एस.आर.आई. कार्यक्रम को अगले 5 वर्षों तक के लिए जारी रखने हेतु 43.18 करोड़ रूपये का प्रावधान किया है। इस चरण में सहभागी शोध कार्यों को विभिन्न राज्य कृषि विश्वविद्यालयों और एस.आर.आई. के मुख्य कार्यक्रमों को जोड़कर शोध कार्य को आगे बढ़ाया जायेगा। इस चरण में एस.आर.आई. के कार्यक्रमों को बढ़ावा देने हेतु संस्थागत विकास को अधिक महत्व दिया जाना शामिल है। तीसरे चरण में 6 प्रमुख राज्यों– उड़ीसा, छत्तीसगढ़, झारखण्ड, बिहार, आसाम व मणिपुर को मुख्य रूप से केन्द्र में रखा जाना प्रस्तावित है।

निश्कर्ष

कार्यक्रम के शुरूआती दौर में कम पूंजी और कम खर्च होने के कारण कृषक समुदाय में एस.आर.आई. की लोकप्रियता निरन्तर बढ़ी है। यह भी देखने में आया है कि एस.आर.आई. के बड़े बदलाव के कारण अधिकतर किसान अपनी खेती में इसे स्वीकार किये जाने की प्रवृत्ति देखने में आयी है। एस.आर.आई. के प्रमुख लाभों में उपज में वृद्धि, जल उत्पादकता में वृद्धि, निवेश हेतु नकद खर्च में कमी, और बीज की गुणवत्ता में सुधार प्रमुख रहे हैं। इन व्यक्तिगत लाभों के अतिरिक्त एस.आर.आई. विधि में रसायनिक खाद और अन्य निवेशों के कम प्रयोग के कारण पर्यावरणीय लाभ अधिक प्राप्त होता है।

एस.आर.आई. पद्धति को पूरे देश में विस्तारित करने के लिए सबसे जरूरी होगा कि किसानों की परम्परागत सोच में बदलाव आये। इसके साथ ही किसानों की दृष्टि से उपयुक्त धान की खेती की इस पद्धति को सरकार में लोकप्रिय बनाने के लिए पहल किया जाना आवश्यक होगा। सरकार व स्वैच्छिक संगठनों के संयुक्त प्रयास से छोटे, मझोले किसानों के बीच इस तकनीक को अपनाने में अधिक सफलता पाई जा सकती है। एस.आर.आई. पद्धति के लिए उपयुक्त क्षेत्रों का चयन कर इसकी और अधिक सफलता सुनिश्चित की जा सकती है। किसानों एवं कृषिगत पेशेवरों को इस विधि पर प्रशिक्षण दिया जाना आज की आवश्यकता है और भारत में एस.आर.आई. विधि को धान की खेती की संस्कृति में शामिल करने हेतु पूरे भारत के स्तर पर एक नियोजन कर उसे विशिष्ट अभियान के रूप में चलाने की आवश्यकता है तभी हम एक व्यापक परिप्रेक्ष्य में, खाद्य सुरक्षा, पर्यावरण संरक्षा तथा कम आर्थिक निवेश की सोच का साकार कर सकेंगे।

■

बिश्वनाथ सिन्हा
वरिष्ठ कार्यक्रम अधिकारी
सर दोराबजी टाटा ट्रस्ट व सम्बद्ध ट्रस्ट
मुम्बई
ई–मेल : bsinha@sdtatatrust.co.in

तुषार दास
कार्यकारी निदेशक
लाइवोलिंक फाउण्डेशन
भुवनेश्वर
ई–मेल : tushar.ht@rediffmail.com

SRI : A Scaling up Success
LEISA INDIA, Vol. 15, No.1, March 2013

ज्ञान मंच (नेटवर्किंग)

एस.आर.आई.- भारत गूगल समूह

अनिबर्ता विश्वास

एस.आर.आई. पद्धति सघन ज्ञान आधारित होने के कारण किसानों में इसकी ग्राह्यता अधिक है। इस पद्धति को भारत में आयोजित कार्यशालाओं, परिसंवादों, विभिन्न वेबसाईटों व प्रकाशनों के माध्यम से और अधिक प्रसारित किया जाना महत्वपूर्ण है। लीज़ा इण्डिया पत्रिका ने इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है और स्थायी नवीन परिवर्तनों को आरम्भिक स्थिति में अत्यधिक प्रसारित किया है।

पिछले दशकों में ज्ञान के आदान–प्रदान और प्रसार के कारण इस विषय पर शोध व अन्य क्षेत्रों के साथ कृषि क्षेत्र को भी काफी लाभ मिला है। जानकारियों के आदान–प्रदान की प्रगतिशील पद्धति ने शोध के क्षेत्र में कार्य करने वाले लोगों को आंकड़े व सूचनाएं आदि ऑन लाईन उपलब्ध कराई हैं, जिससे सामाजिक वातावरण में अधिक बदलाव आया है। यही नहीं एक अन्य महत्वपूर्ण विषय यह भी है कि ई–फोरम के माध्यम से एस.आर.आई.–भारत गूगल समूह का उद्भव भी हुआ है। एस.आर.आई.–भारत गूगल समूह अक्टूबर 2007 में एस.डी.टी. और मुम्बई के अन्य सम्बन्धित ट्रस्टों द्वारा अस्तित्व में आया, जिसने एस.आर.आई. को और अधिक विस्तारित करने की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

इस समूह का प्रमुख उद्देश्य यही था कि एस.आर.आई. फोरम के माध्यम से किसानों, नागर समाज, शोध छात्रों, वैज्ञानिकों, कृषि विशेषज्ञों व अन्य जो इस विषय में रूचि रखते हो, को सामूहिक रूप से एक समूह के माध्यम से आपसी वैचारिक आदान–प्रदान करने का एक उचित फोरम मिले व मूल्यवान सूचनाएं लोगों तक पहुँचे।

एस.आर.आई.–भारत गूगल समूह की गतिविधियों में पारिस्थितिकी पद्धति को और अधिक बेहतर बनाने की दिशा में भी विशेष कार्य किये जा रहे हैं। इस समूह में ऐसे स्थानीय और संस्थागत कृषि आधारित जानकारियों व सूचनाओं को समाहित किया गया है जिससे जैविक खेती और स्थायी कृषि के विविध क्षेत्रों में सहयोग प्राप्त हो सके।

इस समूह के द्वारा सदस्यों के माध्यम से उनके अनुभवों पर आधारित सिद्वान्तों द्वारा विभिन्न फसलों जैसे गेहूँ, गन्ना, टांगुन, सब्ज़ियों, सफेद सरसों और अन्य विविध फसलों की उत्पादकता बढ़ाई जा सकती है। समूह के माध्यम से सामाजिक, आर्थिक दृष्टि को ध्यान में रखते हुए कुछ प्रमुख नवीन सोचों का भी उद्भव हुआ है। यह जानना उपयुक्त होगा कि इस मंच पर ज्ञान का आदान–प्रदान मात्र एस.आर.आई. तक ही सीमित नहीं है। वरन् खाद्य सुरक्षा और जलवायु परिवर्तन जैसे प्रमुख व ज्वलन्त मुद्दे भी समूह की चर्चा का प्रमुख विषय होते हैं।

एस.आर.आई. विधि से की गई खेती की विभिन्न सफल कहानियां एवं क्षेत्रीय स्तर पर किये गये अध्ययनों व अनुभवों को भी इस समूह पर चर्चा का एक वृहद मंच मिला है। यह समूह चर्चाओं एवं अन्य गतिविधियों का संक्षिप्तीकरण कर उनको प्रत्येक दो महीने पर प्रकाशित भी करता रहता है। ये अद्यतन सूचनाएं समूह की वेबसाईट http://sdtt-sri.org/discussion-groups पर आसानी से उपलब्ध हैं।

एस.आर.आई. के विभिन्न पहलूओं पर जानकारियों एव परिचर्चाओं का आदान–प्रदान मेल के माध्यम से भी किया जा रहा है। यह समूह विभिन्न हितभागियों के बीच समन्वयन का काम भी बखूबी कर रहा है। ई–समूह के माध्यम से एस.डी.टी.टी. से वित्तीय सहायता प्राप्त सैकड़ों गैर–सरकारी संगठन एस.आर.आई. गतिविधि को अपने क्षेत्र में प्रोत्साहित करने का कार्य कर रहे हैं तो दूसरी तरफ अपने क्षेत्र में एस.आर.आई. से सम्बन्धित किसानों के सफल अनुभवों को समूह के माध्यम से अन्य लोगों तक पहुँचा भी रहे हैं।

यद्यपि कि सूचनाओं के इस आदान–प्रदान और परिचर्चाओं को कुछ आलोचकों द्वारा अधिक महत्व नहीं दिया जा रहा है। उसके पीछे उनका तर्क यह है कि समाज के अन्तिम व्यक्ति तक यह सूचना सही ढंग से नहीं पहुँच पा रही है। आलोचकों का यह भी कहना है कि इस समूह पर ऐसे बहुत से किसानों के अनुभवों को नहीं शामिल किया जाता है जिन्होंने एस.आर.आई. गतिविधियों में आने वाली चुनौतियों का सामना करते हुए इसे अपनाया और सफल भी हुए।

तथापि, कई प्रमुख सम्बन्धित क्षेत्रों में ज्ञान के माध्यम से प्राप्त जानकारियाँ एस.आर.आई. की दृष्टि से कई अर्थों में समालोचनात्मक होते हुए भी स्थायी दिशा की ओर अग्रसरित हुई हैं। एस.आर.आई. के माध्यम से ज्ञान आधारित इस प्रगतिशील ई–साधन ने अधिक फैलाव कर अपने महत्व को प्रदर्शित किया है। आज एस.आर.आई.–भारत नेटवर्क एक ऐसा मील का पत्थर साबित हो रहा है जहाँ ज्ञान, अनुभव, एक दूसरे से सीखने की प्रवृत्ति एवं सूचनाओं को अधिक महत्व देते हुए लोग स्थानीय खोज की ओर अग्रसर हैं।

एस.आर.आई.–भारत में सदस्यता के लिए ईमेल sriindia+owner@googlegroups.com पर सम्पर्क करें। ■

अनिबर्ता विश्वास
लाइवोलिंक फाउण्डेशन
ए–39, नीलकण्ठ नगर, देबरॉय कालेज
नया पल्ली, भुवनेश्वर– 7510112, उड़ीसा
ई–मेल : livolink@gmail.com

SRI : A Scaling up Sucess
LEISA INDIA, Vol. 15, No.1, March 2013

पारिवारिक खेती की दस विशेषताएं

जान डोय्वे वन दार प्लोएग

यद्यपि कि इस वर्ष अन्तर्राष्ट्रीय पारिवारिक कृषि वर्ष मनाया जा रहा है, फिर भी पारिवारिक कृषि को लेकर कुछ भ्रान्तियां अभी भी हैं। जैसे कि : वास्तव में यह है क्या? इसमें अनूठापन क्या है? और औद्योगिक खेती अथवा पारिवारिक कृषि कृषि व्यापार से किस प्रकार भिन्न है? उन स्थानों पर यह भ्रान्ति और भी अधिक है, जहां आधुनिकीकरण के फेर में समाज खेती से दूर होता जा रहा है। अन्तर्राष्ट्रीय पारिवारिक कृषि वर्ष प्रारम्भ होने के अवसर पर जान डोय्वे वन दार प्लोएग कुछ वैचारिक स्पष्टता प्रदान कर रहे हैं। उन्होंने कहा कि पारिवारिक खेती की दुनिया के अन्दर पुरातन व अव्यवस्थित तथा आकर्षक व लुभावनी दोनों स्थितियां मिलती हैं।

खेतिहर परिवार अपने श्रम, निष्ठा तथा लगन से अपना खेत तैयार करते हुए

पारिवारिक खेती क्या है?

पारिवारिक खेती उन घटनाओं में से एक है, जिन्हें समझने में पश्चिमी समुदायों को लगातार मुश्किलें आती रही हैं। ऐसा बहुत से कारणों की वजह से है। नौकरशाही तर्क, औपचारिक प्रोटोकॉल और औद्योगिक विचारधारा का तेजी से हमारे समाज पर हावी होना उनमें से एक है, जिसकी वजह से पारिवारिक कृषि लोगों के लिए असंगत लगती है। इसमें एक तरफ तो पुरानी व अव्यवस्थित स्थितियां देखने को मिलती हैं तो दूसरी तरफ यह आकर्षक व लुभावना भी लगता है। पारिवारिक खेती को समझना तथा अपनाना इसलिए भी मुश्किल है, क्योंकि प्रारम्भतया यह एक जटिल, बहुस्तरीय तथा बहु आयामी घटक है। मैंने नीचे लिखित पारिवारिक कृषि की दस विशेषताओं की पहचान की। हालांकि एक समान परिस्थितियों में प्रत्येक स्थान पर एक ही समय ये सभी विशेषताएं हमेशा नहीं मिलती हैं। याद रखने योग्य सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि वास्तव में पारिवारिक खेती तभी समृद्ध होती है, जब – खेती परिवार की स्वयं की हो और दूसरे खेती के सभी कार्य परिवार के सदस्यों द्वारा पूरे किये जाते हों।

गौर करने वाली बात यह भी है कि पारिवारिक खेती का खेत के क्षेत्रफल से कोई सम्बन्ध नहीं होता है और खासकर जब हम छोटे क्षेत्रफल की खेती की बात करते हैं, तो यह बहुत हद तक लोगों की खेती एवं उनकी आजीविका से जुड़ा होता है। यह कहना अधिक उपयुक्त होगा कि पारिवारिक खेती उनके जीवन का एक अंग होता है।

खेती व परिवार में संतुलन

अब हम पारिवारिक कृषि की 10 विशेषताओं को नजदीक से देखेगें, जो निम्नलिखित हैं –

- वास्तव में, खेतिहर परिवार का नियन्त्रण उन सभी प्रमुख संसाधनों पर होता है, जिन्हें खेत में प्रयुक्त किया जाता है। इसमें न केवल भूमि, वरन् जानवरों, फसलों, आनुवंशिक सामग्रियों, घरों, भवनों, मशीनों के साथ ही उन जानकारियों, तकनीकों को भी शामिल किया जाता है, जो खेती के लिए उपयोगी होते हैं, साथ ही यह ज्ञान भी शामिल होता है कि इन सभी संसाधनों का संयुक्त उपयोग किस प्रकार किया जाये। इन संसाधनों में विभिन्न सम्बन्धित हितभागियों एवं बाजारों पर पहुंच के साथ ही सहकारिता का सहस्वामित्व व समान प्रतिनिधित्व महत्वपूर्ण संसाधन हैं।

  पारिवारिक किसान इन संसाधनों का उपयोग केवल लाभ के लिए नहीं करते हैं, वरन् वे इनका उपयोग जीवित रहने के लिए करते हैं, एक ऐसी आय प्राप्त करने के लिए करते हैं, जिससे इन्हें एक बेहतर जीवन मिल सके और यदि सम्भव हो तो ये खेत को और अधिक विकसित करने के क्रम में भी काम कर सकें। इसके लिए किसान अपने खेतों में सिंचाई एवं अन्य मशीनी तकनीकों का प्रयोग करने के बजाय स्वयं से सारा काम करते हैं।

- वास्तव में, पारिवारिक कृषि उस स्थान पर होती है, जहां परिवार श्रम शक्ति का प्रमुख हिस्सा होता है अर्थात् खेती से उसे स्वरोजगार मिलता है और इससे परिवार की प्रगति होती है। परिवार निष्ठा, प्रतिबद्धता तथा कठिन श्रम से अपनी पूरी खेती को विकसित करता है, जिससे आगे चलकर पूरे परिवार की आजीविका उन्नत होती है।

- खेत परिवार की बहुत सी आवश्कताओं को पूरा करता है, जबकि परिवार खेत के लिए संभावनाएं, माध्यमों के साथ–साथ उसकी सीमाएं भी तय करता है। परिवार एवं खेत के बीच का यही अन्तर्सम्बन्ध खेत के विकास के लिए बहुत से निर्णय लेने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। प्रत्येक विशेष खेत अपना एक विशिष्ट संतुलन रखता है। यह संतुलन ठीक उसी प्रकार है, जैसे खाना खाने के लिए मुंह तथा काम करने हेतु हाथ के बीच संतुलन होता है।

भूत, भविष्य व वर्तमान में जुड़ाव

- पारिवारिक खेत खेतिहर परिवारों को आंशिक या समग्र आय व खाद्य प्रदान करते हैं। खुद से उगाये गये खाद्यों की गुणवत्ता पर उनका नियन्त्रण रहता है। लोग इस बात से निश्चिन्त रहते हैं कि ये पदार्थ दूषित नहीं हैं और इस प्रकार पूरे विश्व में किसानों के लिए खेती के महत्व में वृद्धि हुई है।
- हालांकि खेत सिर्फ उत्पादन का स्थान मात्र नहीं हैं। यह खेतिहर परिवारों का घर है। यह वह स्थान है, जहां वे रहते हैं। यहां उन्हें अधिकाधिक आश्रय मिलता है। अर्थात् यही वह जगह है, जहां परिवार निवास करता है और बच्चों का विकास होता है।
- खेतिहर परिवार एक ऐसे बहाव का हिस्सा है, जहां भूत, वर्तमान व भविष्य का जुड़ाव होता है। इसका अर्थ यह है कि प्रत्येक खेत का अपना एक अलग इतिहास होता है, जो यादों से भरा होता है। इसका अर्थ यह भी है कि माता–पिता अपने बच्चों के लिए कार्य करते हैं। वे अपनी आने वाली पीढ़ी को खेती में अथवा उससे इतर एक ऐसा ठोस बिन्दु देना चाहते हैं, जहां से वे प्रारम्भ कर सकें और सबसे बड़ी बात तो यह है कि खेती पिछली पीढ़ी के कार्यों व निष्ठा का प्रतिफल होती है, जिसपर अक्सर गर्व होता है और जब इस संयुक्त प्रयास को तोड़ा अथवा नष्ट किया जाता है, तब हमें गुस्सा आता है।
- पारिवारिक खेत वे स्थान होते हैं, जहां पर अनुभवों का भण्डार होता है। खेत ही वह स्थान है, जहां से लोग सीखते हैं और उस सीख व जानकारी को अपनी अगली पीढ़ी को देते हैं, जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक ज्ञान व जानकारियां बांटने का एक उचित व मजबूत तरीका है। एक बड़े परिप्रेक्ष्य में पारिवारिक खेती अकसर बुनियादी बातों जैसे नयी दृष्टि, नवीन अभ्यासों, बीजों आदि को प्रसारित करती रहती है।

पर्यावरण के साथ बांधना

एक पारिवारिक खेती सिर्फ एक आर्थिक उद्योग नहीं है, और इसका उद्देश्य सिर्फ लाभ कमाना नहीं है, अपितु यह एक ऐसा स्थान है, जहां पर निरन्तरता और संस्कृति महत्वपूर्ण है। एक खेतिहर परिवार एक बड़े ग्रामीण समुदाय का एक हिस्सा होता है और कभी–कभी यह शहरों के अन्दर विस्तारित नेटवर्क का भी एक हिस्सा होता है।

- इसी प्रकार, पारिवारिक खेत वह स्थान है, जहां संस्कृति लागू की जाती है और संरक्षित की जाती है। खेत सांस्कृतिक विरासत का एक स्थान हो सकता है।
- परिवार व खेत व्यापक ग्रामीण अर्थव्यवस्था का भी भाग होते हैं। स्थानीय समुदाय के सांस्कृतिक आचार–विचार को आगे ले जाने के कारण वे स्थानीयता से बंधे होते हैं। यहीं पर वे खरीदते हैं, खर्च करते हैं और अन्य दूसरी गतिविधियों में लगे रहते हैं। इस प्रकार पारिवारिक खेती स्थानीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाती हैं।
- ठीक इसी प्रकार, पारिवारिक खेती व्यापक ग्रामीण परिदृश्य का एक भाग होता है। यह प्रकृति के विपरीत काम करने के बजाय पारिस्थितिकी प्रक्रियाओं एवं संतुलन का प्रयोग करते हुए काम कर सकते हैं और बिना कोई नुकसान पहुंचाये परिदृश्य की सुन्दरता को संरक्षित रख सकते हैं। जब पारिवारिक खेती प्रकृति के साथ काम करती है, तो जैव विविधता संरक्षण में भी अपना योगदान देती है और वैश्विक उष्मीकरण से लड़ने में मदद करती है।

स्वतन्त्रता व स्वायत्तता

परिवारिक खेती एक संस्था के रूप में आकर्षक है, साथ ही इसे स्वायत्तता से भी जोड़कर देखा जाता है। एक तरह से यह दोहरी स्वतन्त्रता का प्रतीक है। एक तरफ तो यह बाहरी शोषण से मुक्ति दिलाता है, तो दूसरी तरफ यह भी स्वतन्त्रता होती है कि हम अपने तरीके से इसमें काम कर सकते हैं। इसके साथ ही प्रकृति की जीवित वस्तुओं से निरन्तर सम्पर्क बना रहता है।

पारिवारिक खेती जीवन व कार्य तथा उत्पादन व विकास हेतु शारीरिक व मानसिक श्रम की एक प्रत्यक्ष इकाई का प्रतिनिधित्व करती है। यह एक ऐसी संस्था है, जो प्रतिकूल पूंजीवादी वातावरण में भी उत्पादन की निरन्तरता बनाये रख सकती है। ठीक एनियरोबिक कीटाणु की तरह, जो ऑक्सीजन रहित वातावरण में भी अपनी जीवितता बनाये रखता है।

इसकी महत्ता क्यों हैं

पारिवारिक खेती कृषिगत गतिविधियों को अत्यधिक उत्पादक, स्थाई, ग्रहणशील, संवेदनशील, नवोन्वेषी तथा गतिशील बनाने का वादा करती है। इन सभी विशेषताओं को देखते हुए कहा जा सकता है कि पारिवारिक खेती खाद्य सुरक्षा तथा खाद्य संप्रभुता में सशक्त योगदान कर सकती है। विभिन्न माध्यमों से यह आर्थिक विकास को मजबूती दे सकती है, रोजगार के अवसरों का निर्माण कर आय उपार्जन में सहायक हो सकती है। यह समाज के बड़े तबके को आकर्षक रोजगार के अवसर प्रदान कर सकती है और समाज के दलित, वंचित समुदाय को समाज की मुख्य धारा से जोड़ने में मददगार साबित हो सकती है। इसके साथ ही पारिवारिक खेती वातावरण की सुन्दरता व उसकी जैव विविधता को बनाये रखने में भी लगातार सहयोग कर सकती है।

बाहरी खतरे

हालांकि इन सभी वादों को प्रभावी ढंग से महसूस कराना असंभव हो सकता है। वर्तमान में यह विशेष मामला है, जब किसान हाड़तोड़ मेहनत करने के बावजूद गरीब ही रह रहा है। ऐसे समय में जबकि निवेश की लागत अधिक है और उत्पादन का मूल्य कम मिल रहा है और दीर्घकालिक नियोजन की कोई भी संभावना अस्थिर है, जब बाजार तक लोगों की पहुंच में आने वाली कठिनाईयां बढ़ती जा रही हैं, कृषिगत नीतियां पारिवारिक खेती को उपेक्षित कर रही हैं और

जबकि भूमि व जल संसाधनों पर पूंजीपतियों का कब्जा होता जा रहा है। ऐसी विषम स्थिति में, खेतिहर परिवार एक व्यापक समुदाय में अपना योगदान करना लगभग असंभव मान रहे हैं। उनके अनुसार खाद्य सुरक्षा में उनकी भूमिका नगण्य है और यही कारण है कि पारिवारिक खेती व छोटे–मझोले किसानों का अस्तित्व समाप्त होने की तरफ अग्रसर है क्योंकि खेतिहर परिवारों की भूमि बेकार हो जा रही हैं अथवा होने वाली है। सूक्ष्मतर सूचकांक के अनुसार इस विश्व में आज ग्रामीण परिवारों में से 70 प्रतिशत गरीब हैं।

आन्तरिक खतरे

इसी प्रकार से कुछ आन्तरिक खतरे भी हैं। आजकल यह बात अधिक प्रचलित हो रही है कि पारिवारिक खेती को बाजार उन्मुख बनाने की आवश्यकता अधिक है। यह अधिकाधिक मुनाफा कमाने के विचार से प्रेरित है। कुछ लोगों का तो यहां तक कहना है कि यही एक रास्ता है, जिससे युवा वर्ग को खेती से जोड़ा जा सकता है। संक्षिप्त में कहा जाये तो, पारिवारिक खेती खेतिहर कम, उद्यमी अधिक हो गयी। इस दृष्टिकोण के अनुसार, दक्षिण में पारिवारिक खेती को एक विषय की तरह माना जाता है और उसी की तर्ज पर उत्तर में पारिवारिक खेती के आधुनिककरण की प्रक्रिया आरम्भ हो गयी है।

वास्तव में, यूरोपियन खेती औद्योगिक खेती की ओर परिवर्तित हो रही है। यहां लोग उपर लिखी गई सभी विशेषताओं को भूलकर पारिवारिक खेती से मात्र श्रम आपूर्ति करने की दिशा में मुड़ गये हैं। औपचारिक रूप से ये सभी उद्यमी खेत अभी भी पारिवारिक खेत ही हैं, लेकिन मूलतः वे एक दूसरे से काफी भिन्न हैं। इनमें एक बड़ा फर्क यह है कि वास्तविक पारिवारिक खेत विशेषकर प्राकृतिक, आर्थिक व मानव संसाधनों के चतुराईपूर्ण नियोजन व एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक हस्तान्तरित जानकारियों के माध्यम से बढ़ते, विकसित होते हैं, जबकि उद्यमी खेत दूसरे पारिवारिक खेतों का अधिग्रहण करते हुए ही बढ़ते, विकसित होते हैं। बाजार की दृष्टि से खेती करने की यह प्रवृत्ति पारिवारिक खेतों की प्रभुता व निरन्तरता के लिए एक गम्भीर आन्तरिक चुनौती है और इसे हम लगभग हर जगह देख रहे हैं।

फिर से किसानी

यह एक अच्छी बात है कि समुदाय फिर से किसानी की तरफ उन्मुख हो रहा है। बहुत से खेतिहर परिवार कृषि पारिस्थितिकी सिद्धान्तों को अपनाकर, नयी गतिविधियों में अपनी सक्रियता बढ़ाकर तथा नये उत्पादों व सेवाओं का उपार्जन कर, प्रायः निकटस्थ बाजारों में अपने उत्पादों की बिक्री आदि के माध्यम से अपनी स्थिति व आय को मजबूती प्रदान कर रहे हैं। किसानी की तरफ पुनः उन्मुख होने के लिए वे नयी विश्लेषणात्मक रणनीतियां निर्धारित कर रहे हैं। वे खेती को पुनः लाभप्रद बनाने का प्रयास कर रहे हैं, लेकिन ठीक इसी समय वे पारिवारिक खेती को भी मजबूत कर रहे हैं। पुनः किसानी पारिवारिक खेती के बचाव व मजबूती पर समान रूप से काम कर रही है।

क्या किया जा रहा है?

पारिवारिक खेती के भाग्य के लिए नीतियाँ बहुत अधिक महत्वपूर्ण हो सकती हैं। यद्यपि पारिवारिक खेत बहुत विपरीत परिस्थितियों में भी अपनी उत्तरजीवितता बनाये रख सकती है। सकारात्मक परिस्थितियां पारिवारिक खेती को पूर्ण क्षमतावान बनाने में मदद कर सकती हैं। संक्षेप में कहा जाये, तो पारिवारिक खेती को उन्नत बनाने के लिए न सिर्फ नीतियों वरन् राज्य सरकारों, बहुराष्ट्रीय मंचों जैसे– विश्व खाद्य संगठन, कृषिगत विकास हेतु अन्तर्राष्ट्रीय अनुदान एवं दूसरे अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों आदि के साथ राजनीतिक दलों, स्वैच्छिक संगठनों एवं नागर समाज की भी महत्वपूर्ण जिम्मेदारी है।

अधिकारों की सुरक्षा एवं संसाधनों, शोध एवं प्रसार, शिक्षा, बाजार श्रृंखला, सामाजिक सुरक्षा, स्वास्थ्य व अन्य दूसरे पहलुओं में निवेश के द्वारा खेतिहर परिवारों के स्वयं के निवेश को रोका गया है। अभी हाल ही में खाद्य सुरक्षा एवं पोषण पर उच्च स्तर के विशेषज्ञों द्वारा इस बात की पुष्टि फिर से की गयी है।

पारिवारिक खेती को सफल बनाने के लिए ग्रामीण संगठनों तथा अभियानों/गतिविधियों को समान रूप से मजबूती प्रदान करना अति महत्वपूर्ण है। हमें हमेशा यह बात ध्यान में रखनी होगी कि पूरे विश्व में खेतिहर किसान कठिन परिस्थितियों में भी नये परिणामों को प्राप्त करने का प्रयास कर रहे हैं। इसी प्रकार, सफल परिणामों की पहचान कर, आदर्श गतिविधियों का निर्माण कर उनका प्रसार अन्य स्थानों व अन्य खेतिहर परिवारों तक तथा उनको आपस में मजबूती से जोड़ने की प्रक्रिया हमारे एजेण्डा के महत्वपूर्ण विषय हो सकते हैं। एक अच्छी खबर यह है कि, पारिवारिक खेती की इस विचारधारा के लिए प्रत्येक छोटा से छोटा चरण काफी महत्वपूर्ण है।

■

जान डोय्वे वन दार प्लोएग वाशिंगटन विश्व विद्यालय और बीजिंग में चाईना कृषि विश्वविद्यालय में ग्रामीण समाजशास्त्र के प्रवक्ता हैं। इनसे निम्न ईमेल आई.डी. व वेबसाईट पर सम्पर्क किया जा सकता है–

ई–मेल : JanDouwe.Vanderploeg@wur.nl

वेबसाईट : www.jandouwevanderploeg.com

Strengthening Family Farming
LEISA INDIA, Vol. 4, No.4, December 2013

प्याज की खुदाई एवं बोरों में रखना

किसान उत्पादक संघो ने उपभोक्ता मूल्यों में किसानों की हिस्सेदारी बढ़ाई

पी. नन्दीश, आर. संजीव व आर.एस.एस. हूपर

स्वयं द्वारा गठित उत्पादक संघ के माध्यम से मुट्ट्लुर (प्याज की एक प्रजाति) उगाने वाले किसानों की हिस्सेदारी उपभोक्ता मूल्यों में बढ़ रही है। व्यवसायियों के शोषण की समस्या का समाधान करते हुए नये बाजारों की खोज, समय से ऋण व गुणवत्ता पूर्ण बीजों की उपलब्धता आदि सभी के कारण ये किसान संगठित गतिविधि एवं वचन बद्धता के माध्यम से अधिकाधिक लाभ प्राप्त कर रहे हैं।

करासानुर के सघन दोआबा क्षेत्र में रहने वाले अधिकांश लोग या तो भूमिहीन हैं अथवा छोटे व मझोले किसानों की श्रेणी में आते हैं। लगभग 500 एकड़ में विस्तारित यह सघन दोआबा क्षेत्र तमिलनाडु के विल्लुपुरम जिले में वनूर विकास खण्ड के नल्लावयुर उप दोआबा के अन्तर्गत आता है। इस क्षेत्र में औसत वर्षा 1200 मिमी0 के लगभग है, जो जिले की औसत वर्षा से कम है। यहाँ की मिट्टी बलुई दोमट व चिकनी दोमट है और लगभग 10 प्रतिशत भूमि क्षारीय है। विभिन्न जलवायुविक कारकों के चलते यहां पर कृषि आर्थिक रूप से नुकसानदायक सिद्ध हो रही है और लोगों में आय, आजीविका व खाद्य असुरक्षा की भावना बढ़ती जा रही है।

इस क्षेत्र की मुख्य फसल धान व प्याज है। करासानुर एवं उसके आस–पास के गांवों में प्याज उगाने वाले किसानों के पास 2 से 3 एकड़ भूमि है और इस प्रकार लगभग 250 एकड़ भूमि पर प्याज उगाई जाती है। वे इसी गांव से उत्पन्न हुई प्याज की एक प्रचलित प्रजाति ''मुट्टलूर'' की खेती करते हैं। अपने तीखेपन के कारण यह प्रजाति निर्यात के लिए अच्छी मानी जाती है और स्थानीय स्तर पर भी इसकी व्यापक मांग है। प्याज के एक बीज से 2–4 पौध निकलते हैं और इनकी अंकुरण एवं बढ़त अवस्था लगभग 15 दिनों की होती है। मुख्यतः इस बीज का स्रोत तमिलनाडु का कुड्डालोर जनपद है। किसान प्याज की फसल लेने के तुरन्त बाद ही उत्पाद को गांव स्तर के व्यापारियों को बेच देते थे। प्याज को शीघ्र ही बेच देने के पीछे एक बड़ा कारण यह है कि यदि लम्बे समय तक प्याज का भण्डारण कर दिया जाये तो प्याज का वजन 30 प्रतिशत तक घट जाता है और साथ ही किसानों को तुरन्त पैसा भी मिल जाता था। प्रति एकड़ पर उत्पादन लागत रू0 27,383.00 आ रही थी, जिसका 68 प्रतिशत केवल श्रम पर खर्च होता था। औसतन 44 कुन्तल/एकड़ उत्पादन होने पर लगभग 44,000.00 रू0 की ही आमदनी हो पाती थी।

सामान्यतः गाँव के व्यापारी फसल उत्पादन के तुरन्त बाद किसानों से प्याज खरीद लेते थे और थोक अथवा फुटकर व्यापारियों को अच्छे मूल्य पर बेच देते थे। कुछ व्यापारी प्याज को सुखाने के पश्चात् उनका श्रेणीकरण व छंटाई कर उनका भण्डारण करते और अच्छा मूल्य मिलने पर बेचते थे। इस प्रकार वे उसका मूल्य संवर्धन भी करते थे। व्यापारी सालाना लगभग 100 टन प्याज की खरीद–फरोख्त करते थे, जो किसानों के साथ उनके मजबूत व्यापारिक सम्बन्धों को दर्शाता है। ये व्यापारी उत्पाद की गुणवत्ता को लेकर बहुत सतर्क रहते थे, क्योंकि अन्तर्राष्ट्रीय बाजार के खरीददारों को लुभाने के लिए गुणवत्तापूर्ण उत्पाद होना बहुत आवश्यक है। बड़े–बड़े व्यापारियों द्वारा अन्य देशों जैसे– मलयेशिया, सिंगापुर आदि को अधिकाधिक उत्पाद निर्यात किया जाता है।

जबकि किसान सम्पूर्ण मूल्य श्रृंखला में 17 प्रतिशत की हिस्सेदारी प्राप्त कर रहे हैं, थोक व्यापारी का लाभांश 43 प्रतिशत तक पहुंच जा रहा है।

कारासानुर गाँव में प्याज मूल्य श्रृंखला में धन का बहाव (प्रति किग्रा०)

भूमिका	निवेशित लागत	लाभांश	कारक
उपयोग			उपभोक्ता
खुदरा	रु० 0.32 (3.8%)	रु० 4.56 (21.6%)	खुदरा व्यापारी
थोक	रु० 1.26 (15.1%)	रु० 9.27 (42.8%)	थोक विक्रेता
थोक	रु० 0.53 (6.42%)	रु० 3.94(18.2%)	बिचौलिया
उपज	रु० 6.23 (74.7%)	रु० 3.77 (17.4%)	किसान

स्रोत : ए०एल०सी०आई०, भारत द्वारा बी० आई०डब्लू०एस० रिपोर्ट

सम्पूर्ण लागत का लगभग 74.7 प्रतिशत खर्च किसानों द्वारा वहन किया जाता है और व्यापारी, थोक विक्रेता व फुटकर व्यापारी द्वारा क्रमशः 6.42 प्रतिशत, 15.12 प्रतिशत और 3.75 प्रतिशत खर्च ही सहन किया जाता है। जबकि लाभ की दृष्टि से देखें तो व्यापारी, थोक विक्रेता, फुटकर व्यापारी का लाभ में हिस्सा क्रमशः 18.18 प्रतिशत, 42.76 प्रतिशत व 21.63 प्रतिशत होता है, और किसान की हिस्सेदारी लाभ पाने में मात्र 17.43 प्रतिशत ही होती है। यह कहना बिल्कुल ही सही होगा कि प्राथमिक उत्पादक के तौर पर किसान प्याज की खेती में बड़ा जोखिम उठाते हैं और इससे सिर्फ थोक विक्रेता व फुटकर व्यापारी ही अच्छा लाभ लेते थे।

जलवायु सहनशील गतिविधियों को अपनाना

वर्ष 2007 में, एम0एस0 स्वामीनाथन शोध संस्थान द्वारा कारासनूर के दोआब क्षेत्र में पांच विभिन्न कृषि–पारिस्थितिकी क्षेत्रों में एक परियोजना ''प्राकृतिक संसाधनों के स्थाई उपयोग व आजीविका अवसरों को बढ़ाने हेतु समुदाय प्रबन्धित जैव–औद्योगिक जलीय भूमि'' का क्रियान्वयन प्रारम्भ किया। ये पांच विभिन्न क्षेत्र चार राज्यों में आते थे। परियोजना के प्रारम्भ में संस्थान द्वारा प्रत्येक गांव में स्वयं सहायता समूहों की ही तरह किसान व्यापार समूह गठन से किया गया ताकि सूक्ष्म ऋण तक इनकी पहुंच बन एवं किसान विद्यालयों का संचालन सुगमता पूर्वक हो सके। केन्द्रित समूह चर्चा के माध्यम से संयुक्त रूप से समस्या विश्लेषण किया गया। इस विश्लेषण में निकलकर आया कि –

- इस क्षेत्र में मिलने वाला बीज घटिया किस्म का होती है।
- किसान बिना सोचे–समझे कहीं भी प्याज की खेती कर रहे हैं।

खुदी हुई प्याज

- अनिश्चित वर्षा की वजह से फसलों पर कीट एवं व्याधियों का प्रकोप बढ़ रहा है।
- किसानों को उनके उत्पाद का मूल्य न्यूनतम मिलता है।

समस्याओं का श्रेणीकरण किया गया एवं स्थानीय आधार पर आर्थिक परिदृश्य, पारिस्थितिकी संयोजन एवं सामाजिक सहमति को ध्यान में रखते हुए समाधान के संभावित उपायों पर भी चर्चा की गयी। किसान विद्यालयों पर उत्पादन से पहले, उत्पादन के दौरान एवं उत्पादन के पश्चात् की प्रक्रियाओं पर सघन चर्चा की गयी। इसके साथ ही संयुक्त रूप से निरीक्षण एवं दस्तोवजीकरण कार्य भी किया गया। प्रक्षेत्र दिवसों के माध्यम से उनको यह अवसर दिया गया कि वे प्राप्त जानकारियों का प्रदर्शन बड़े स्तर पर कर सकें। प्रशिक्षकों का प्रशिक्षण के माध्यम से तैयार किये गये प्रमुख किसानों ने प्रदर्शनकारी आदर्श किसान के तौर पर अनुभव आदान–प्रदान की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। कुछ जलवायु स्मार्ट गतिविधियों को अपनाया गया, जिसके तहत् अच्छे गुणवत्ता की बीजों का प्रयोग, मृदा स्वास्थ्य कार्ड में की गयी संस्तुतियों के आधार पर परिवर्तन, खेती की टीला एवं नाली विधि, एक पौध से दूसरे पौध के बीच एक निश्चित दूरी अर्थात् 45 सेमी0 x 10 सेमी0 की दूरी को व्यवस्थित करना, एक एकड़ में 88000 पौधों का लगना सुनिश्चित करना, यथोचित जल निकास उपलब्ध कराना, एकीकृत कीट

व्यापारियों के साथ वार्तालाप करते किसान

प्रबन्धन गतिविधियों को अपनाना, अगैती खेती कर मानसून आने से पहले फसल निकाल लेना आदि गतिविधियाँ अपनाई गयीं। गांव स्तर पर स्थापित कृषि मौसम विज्ञान केन्द्र द्वारा गांव ज्ञान केन्द्र के माध्यम से किसानों को समय–समय पर मौसम सम्बन्धी जानकारियाँ उपलब्ध कराई जाती रहीं ताकि वे मौसम के अनुकूल समय से यथोचित निर्णय ले सकें। किसानो को अपनी नाजुकताओं पर समझ बनाने हेतु समुदाय स्तर पर गठित सामुदायिक जलवायु जोखिम प्रबन्धकों द्वारा जलवायु साक्षरता कार्यक्रमों का आयोजन किया गया।

पुडुचेरी के गांव पिल्लीयारकुप्पम में स्थापित ग्राम संसाधन केन्द्र नाल्लावयूर गांव में अवस्थित गांव ज्ञान केन्द्र से जुड़ा हुआ है। गांव ज्ञान केन्द्र हेतु स्थान, विद्युत व एक कार्यकर्ता की तनख्वाह गांव पंचायत द्वारा वहन किया जाता है। इस गांव ज्ञान केन्द्र तक दोआबा क्षेत्र के 10 गांवों के किसान व महिलाओं की पहुंच है, जहां उन्हें मौसम सम्बन्धी जानकारियां, फसल उत्पादन में आने वाली समस्याएं, विभिन्न सरकारी योजनाएं, बेहतर फसल उत्पादन गतिविधियों पर नवीन जानकारियां और बाजार से सम्बन्धित सूचनाएं दैनिक आधार पर मिलती हैं। परियोजना के अन्दर लक्षित सभी किसानों को ग्राम्य संसाधन केन्द्र से सम्बन्धित सूचनाएं पाक्षिक आधार पर लिखित एवं मौखिक संदेश के माध्यम से दी जाती हैं। ये सूचनाएं किसान विद्यालयों पर हुई आवश्यकता आकलन तथा फसल की वृद्धि के आधार पर दी जाती हैं। महीने में एक बार फोन इन कार्यक्रम के माध्यम से किसानों को विशेषज्ञों से रू–ब–रू कराया जाता है।

वर्ष 2007 में नियोजित विधि से प्याज की खेती करने वाले किसानों की संख्या मात्र 23 थी, जो वर्ष 2008 में बढ़कर 400 से भी अधिक हो गयी। उत्पादन भी 2.5 टन प्रति एकड़ से बढ़कर 4 टन प्रति एकड़ हो गया। कुछ किसानों ने 5.5 टन प्रति एकड़ तक उत्पादन प्राप्त किया। दोआबा क्षेत्र में रहने वाले समुदाय ने यह प्रदर्शित कर दिया कि जल संग्रहण व उसके पर्याप्त प्रयोग की वैज्ञानिक विधियों, समान हिस्सेदारी तथा एक संस्थागत ढांचे के माध्यम से जलवायु स्मार्ट कृषिगत गतिविधियों को अपनाते हुए आय तथा खाद्य सुरक्षा में वृद्धि की जा सकती है। यहां के किसान परिस्थिति के अनुरूप लचीले हो रहे हैं और स्थानीय व्यापारियों द्वारा स्वयं के शोषण की समस्या को दूर कर, नये बाजारों की खोज, मूल्य के उतार–चढ़ाव को अपनाते हुए, निवेश हेतु ऋण पर समय से पहुंच और गुणवत्ता पूर्ण बीजों की उपलब्धता आदि के माध्यम से मूल्य अभिवृद्धि श्रृंखला में एक बड़ी हिस्सेदारी पाने में सक्षम हो रहे हैं और यह सभी कुछ विभिन्न हितभागियों के एक–दूसरे के साथ जुड़ाव, वचनबद्धता एवं सामूहिक क्रिया से संभव हो पाया।

किसान उत्पादक संगठनों के माध्यम से सामूहिक विपणन

वर्ष 2009 में, किसान व्यापारिक समूहों का गठन औपचारिक तौर पर हुआ और नल्लावयुर किसान उत्पादक संघ के नाम से इनका खाता बैंक में खोला गया। आज 25 किसान व्यापारिक समूहों के लगभग 400 छोटे एवं मझोले किसान प्याज व धान के कृषिगत व्यापारिक गतिविधि में संलिप्त हैं। किसान उत्पादक संघ का प्रबन्धन संयुक्त रूप से एम0एस0 स्वामीनाथन शोध संस्थान तथा किसान व्यापारिक समूहों द्वारा किया जाता है। इन दोनों की स्पष्ट भूमिका एवं जिम्मेदारियाँ हैं। एम0एस0 स्वामीनाथन शोध संस्थान द्वारा उत्पादक संघ को जानकारियाँ उपलब्ध कराई जाती हैं। जबकि इनकी मासिक बैठकें, निवेश की खरीददारी, विपणन, वित्तीय प्रबन्धन एवं निरीक्षण की जिम्मेदारी किसान व्यापारिक समूह की कार्यकारिणी समिति द्वारा निभाई जाती है।

कम्पनी को सफलतापूर्वक चलाने पर समझ विकसित करने तथा जानकारी बढ़ाने के उद्देश्य से किसान उत्पादक संघों का अन्य किसान उत्पादक संघों में भ्रमण भी कराया गया। आज किसान उत्पादक संघ किसानों के साथ ऋतु अनुकूल फसल नियोजन, सामूहिक रूप से निवेश की खरीददारी और एक सामूहिक खाते से ऋण की वापसी स्वयं से करने में सक्षम हो गये हैं। वर्ष 2011 में, एक विपणन समिति का गठन किया गया, जिनकी जिम्मेदारी उत्पादों के विपणन हेतु व्यापारियों से बात–चीत करनी थी। किसानों को गांव ज्ञान केन्द्र के माध्यम से आस–पास तथा चेन्नई के बाजारों में प्याज के प्रतिदिन के भाव की जानकारी मिलती रहती थी। ऐसी स्थिति में जबकि पहले से ही बहुत से किसान स्थानीय व्यापारियों के साथ एक लम्बी अवधि के व्यापारिक समझौते से बंधे हुए थे, यह बहुत ही चुनौतीपूर्ण कार्य था। किसान उत्पादक संघ के माध्यम से किसान साफ–सुथरी व्यापारिक गतिविधियों जैसे– मूल्य, सही नाप–तौल, निर्यात किये जाने वाले माल पर स्थानीय स्तर पर प्रतिबैग रू0 850 / – तथा चेन्नई के लिए रू0 1200 / – प्रति बैग लाजिस्टिक सहयोग की मांग करने में सक्षम हो सके।

वर्ष 2012 में, आस–पास के गांवों के किसान भी किसान उत्पादक संघों से जुड़ गये। किसान समिति ने निर्णय लिया कि निर्यात हेतु चेन्नई में ही सामान जायेगा और स्थानीय मूल्य रू0 900.00 प्रतिबैग की बजाय प्रति बैग रू0 1700.00 लिया जायेगा। इसके साथ ही समानान्तर रूप से किसानों को इस बात के लिए भी उत्प्रेरित किया जाता रहा कि वे निवेश तथा बीजों की खरीददारी सामूहिक रूप से करें। किसान उत्पादक संघ के पास भविष्य की योजना भी है। भविष्य में वे प्याज सुखाने, श्रेणीकरण करने तथा भण्डारण हेतु एक स्थान का निर्माण करना चाहते हैं ताकि उनके उत्पादों की मूल्य अभिवृद्धि हो सके और वे उसका बेहतर मूल्य प्राप्त कर सकें।

■

पी० नन्दीश, परियोजना समन्वयक
जैव औद्योगिक वाटरशेड परियोजना
एम०एस० स्वामीनाथन शोध संस्थान
तीसरी क्रास गली, तारामनी इन्स्टीट्यूनल क्षेत्र, चेन्नई – 600 0113
ई–मेल : nandeeshcp@gmail.com